जय माँ अम्बे

माता रानी के नवरात्रों का नौ दिन का पाठ

तारा रानी की कथा सहित

चैत्र मास और आश्विन मास के
नवरात्रों की सरल पूजा सम्पूर्ण कथा,
विधान, चालीसा एवं नौ देवियों
की आरतियों सहित

श्री गणेशाय नमः

नौ दिन का पाठ

श्री दुर्गा जी का नवरात्र पाठ

प्रत्येक वर्ष में चैत्र और आश्विन मास के नवरात्रों में किए जाने
के लिए श्री दुर्गाजी का नौ दिन का पाठ कथा
पूजन चालीसा ताराशनी कथा तथा नौ देवियों की आरती सहित

मूल्य-30/-

प्रमुख विक्रेता .-
श्री हरिओम धार्मिक पुस्तक भण्डार
तिरखा कालोनी. वल्लभगढ़
(हरियाणा)
मो. 09213922218

प्रकाशक
अनीता पब्लिकेशन
1917 खारी बावली दिल्ली-6

बुद्धि मुझे प्रदान करिये।

दुर्गा पूजा एवं पाठ विधि

श्री दुर्गा पूजा विशेष रूप से वर्षभर में दो बार नवरात्रों में की जाती है। आश्विन शुक्ला प्रतिपदा को जो नवरात्र प्रारम्भ होते हैं, उन्हें शारदीय नवरात्र कहते हैं। चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से आरम्भ होने वाले नवरात्र वार्षिक नवरात्र कहलाते हैं।

मां दुर्गा के साधक भक्त को स्नानादि से शुद्ध होकर, शुद्ध वस्त्र पहनकर मण्डप में श्री दुर्गा जी मूर्ति अथवा चित्र स्थापित करना चाहिये। मूर्ति के दाहिनी ओर कलश की स्थापना करनी चाहिये। कलश के ठीक सामने जौ बोने चाहिये। मण्डप के पूर्व कोण में दीपक की स्थापना करें। गणपति की पूजा से आरम्भ करके सभी देवी-देवताओं की पूजा के बाद जगदम्बा की पूजा करें।

भस्म, चन्दन, रोली आदि का टीका मस्तक पर लगाकर पूजन आरम्भ करके। बिना टीका लगाये (शून्य मस्तक से) पूजन नहीं करना चाहिये।

नव दुर्गा की प्रार्थना करके सबसे पहले कवच पाठ करकें, फिर अर्गला और कीलक का। इसके बाद रात्रि सूक्त का पाठ करें। इनका पाठ कर लेने पर सप्तशती का पाठ आरम्भ करें।

श्री दुर्गा सप्तशती तेरह अध्यायों में वर्णित है। तेरह अध्यायों में मां भगवती के तीन चरित्र दिये गये हैं।

१. प्रथम चरित्र :—ऋग्वेद स्वरूप है। पहले अध्याय में "मधू व कैटभ" नामक दो शक्तिशाली राक्षसों के सहार का वर्णन है।

२. मध्यम चरित्रः- यजुर्वेद स्वरूप है। इसमें दूसरे अध्याय से चौथे अध्याय तक महिषासुर राक्षस के संहार का वर्णन है।

३. उत्तम चरित्रः- सामवेद स्वरूप है। पांचवें अध्याय से ग्यारहवें अध्याय तक शुम्भ-निशुम्भ आदि राक्षसों के वध का वर्णन है।

बारहवें अध्याय में मां आद्याशक्ति के तीनों चरित्रों का पाठ करने का महत्व है।

तेरहवें अध्याय में राजा सुरथ एवं समाधि नामक वैश्य को देवी जी द्वारा दिये गये वरदानों का वर्णन मिलता है। नौ दिनों में इन तेरह अध्यायों का पाठ करके अन्तिम दिन में मां का भोग दुर्गा चालीसा, विन्ध्येश्वरी चालीसा, स्तोत्र एवं आरती करके समापन करना चाहिये।

पूजा सामग्री–जल, गंगाजल, पंचामृत (दूध, दही, घी, शहद, शर्करा), रेशमी वस्त्र, उपवस्त्र, नारियल, रोली, चन्दन, अक्षत (चावल), पुष्प, पुष्पमाला, धूप, दीप, नैवेद्य, फल, सुपारी, पान, लौंग, इलायची, दक्षिणा।

प्रार्थना

करुणामयी! जगजननी, आनंद व स्नेहमयी मां! आपकी सदा जय हो। हे अम्बे! पंखहीन पक्षी और भूख से पीड़ित बच्चे जिस प्रकार अपनी मां की राह देखते हैं और उसी प्रकार मैं आपकी दया की प्रतीक्षा कर रहा हूं। हे अमृतमयी मां! आप शीघ्र ही आकर मुझे दर्शन दीजिये। मैं आपका रहस्य जान सकूं ऐसी बुद्धि मुझे प्रदान करिये।

पहला दिन

1. शैलपुत्री (परिचय)

वन्दे वाञ्छितलाभाय चन्द्रार्धकृतशेखराम्।
वृषारूढ़ां शूलधरां शैलपुत्रीं यशस्विनीम॥

मां दुर्गा अपने पहले स्वरूप में 'शैलपुत्री के नाम से जानी जाती हैं। पर्वतराज हिंमालय के यहां पुत्री के रूप में उत्पन्न होने के कारण इनका 'शैलपुंत्री' नाम पड़ा था। वृषभ स्थिता इन माताजी के दाहिने हाथ में त्रिशूल और बायें हाथ में कमल पुष्प सुशोभित है। यह नव दुर्गाओं में प्रथम दुर्गा हैं।

नव दुर्गाओं में प्रथम शैलपुत्री दुर्गा का महत्त्व और शक्तियां अनन्त हैं। नवरात्र-पूजन में प्रथम दिवस इन्हीं की पूजा और उपासना की जाती है। इस प्रथम दिन की उपासना में योगी अपने मन को 'मूलाधार' चक्र में स्थित करते हैं। यहीं से उनकी योगसाधना का प्रारम्भ होता है।

पाठ प्रारम्भ

(नव दुर्गा प्रार्थना)

जय जयकार करो माता की, आओ शरण भवानी की। एक बार सब प्रेम से बोलो, जय दुर्गे महारानी की॥
पहली देवी शैलपुत्री हैं, किये बैल पर असवारी। अर्ध चन्द्र माथे पर सोहे, सुन्दर रूप मनोहारी॥
लिये कमण्डल फूल कमल के और रुद्राक्षों की माला। हुई दूसरी ब्रह्मचारिणी, करे जगत में उजियाला॥
पूर्ण चन्द्रमा सी शोभित है, देवी चन्द्रघण्टा माता। इनके सुमिरन निर्बल भी, सबल शत्रु पर जय पाता॥
चौथी देवी कूष्माण्डा हैं, इनकी लीला है न्यारी। अमृत भरा कलश है कर में किये बाघ की असवारी॥
कर में कमल सिंह पर आसन, सबका शुभ करनेवाली। मंगलमयी स्कन्द माता है, जग का दुःख हरने वाली॥
मूनि कात्यायन की कन्या, हैं सबकी कात्यायनी मां। दानवता की शत्रु और, मानवता की सुखदायिनी मां॥
सप्तम कालरात्रि हैं, देवी महाप्रलय ढाने वाली। प्राणिमात्र का रक्षण करतीं, महाकाल को खाने वाली॥
श्वेत बैल है वाहन जिनका, तन पर श्वेताम्बर माला। यही महागौरी देवी है, सबकी जगदम्बा माता॥
शंख चक्र और गदा पद्म, कर में धारण करने वाली। यही सिद्धिदात्री देवी हैं, ऋद्धि सिद्धि देने वाली॥
जय कल्याणमयी नव दुर्गे, जय हो [illegible] यही नवदुर्गे, जय गिरिजा महारानी मां।

देवी कवच

मार्कण्डेय ऋषि बोले– हे पितामह! आप हमें कोई ऐसा परम गुप्त साधन बताइये जिसके द्वारा मनुष्यों की सभी प्रकार से रक्षा हो और जो अभी तक आपने किसी को बताया भी न हो। ब्रह्माजी बोले– हे विप्रवर! इस प्रकार का साधन तो परम पवित्र एवं परम गुप्त देवी जी का कवच ही है, इसी से प्राणीमात्र का कल्याण एवं सब प्रकार की रक्षा होती है। उसे सुनिये! देवी जी के नौ मूर्तियों के नाम इस प्रकार हैं– पहली शैलपुत्री, दूसरी ब्रह्मचारिणी, तीसरी चन्द्रघण्टा, चौथी कूष्माण्डा, पांचवी स्कन्दमाता, छठी कात्यायनी, सातवीं काल रात्रि, आठवीं महागौरी और नौवीं सिद्धिदात्री हैं। जो मनुष्य अग्नि में जल रहा हो, युद्धभूमि में शत्रुओं के मध्य फंस गया हो अथवा घोर संकट से ग्रस्त हो, वह मनुष्य भागवती की शरण में पहुंच जाये तो उसके घोर संकट दूर हो जाते हैं। जो भक्ति भाव से देवी जी का स्मरण करते हैं उनकी सभी प्रकार से उन्नति होती है। हे भगवती! जो भी आपका स्मरण करते हैं, निःसंशय उनकी आप रक्षा करती हो। प्रेत की सवारी करने वाली चामुण्डा देवी हैं। वाराही महिष पर, ऐन्द्री हाथी पर, वैष्णवी गरुड़ पर, माहेश्वरी बैल पर, कौमारी मोर पर और लक्ष्मी कमल के आसन पर विराजमान हैं। श्वेत रूप धारण करने वाली वृषभ वाहन वाली ईश्वरी देवी हैं, हंस पर चढ़ी हुई सभी आभूषणों से भूषित ब्राह्मी देवी हैं। इस प्रकार अनेक रत्नों से विभूषित सभी योगशक्तियों से संयुक्त ये सब मातायें हैं। ये शंख, चक्र, गदा,

शक्ति, हल, मूसल, खेटक, तोमर, परशु, पाश, कुन्द, त्रिशूल, उत्तम आयुध, शारंग, धनुष इत्यादि अस्त्र-शस्त्र दैत्यों के शरीर नाश के लिये, भक्तों को अभय देने के लिये एवं देवताओं के हित के लिये धारण करती हैं। हे देवी! आपके दर्शन कठिन हैं, शत्रुओं के भय को बढ़ाने वाली देवी जी! मेरी रक्षा कीजिये। पूर्व दशा में मेरी रक्षा ऐन्द्री देवी करें, अग्नि कोण में अग्नि देवता, दक्षिण में वाराही, नैत्रत्य कोण में खड्ग-धारिणी, पश्चिम में वारुणी, वायुकोण में मृगवाहिनी, उत्तर में कौमारी, ईशान कोण में शूलधारिणी, ऊपर ब्रह्माणी जी, नीचे वैष्णवी देवी रक्षा करें। इसी प्रकार शववाहिनी चामुण्डा देवी दसों दिशाओं में रक्षा करें। जया मेरे आगे की, विजया मेरी पीछे की, बांई ओर अजिता, दांई ओर अपराजिता रक्षा करें। उद्योतिनी मेरी शिखा की, उमा मेरे मस्तक पर विराजकर, भौंहों की यशस्विनी, भौंहों के मध्य में त्रिनेत्रा, नासिकाओं की यमघण्टा देवी, नेत्रों के मध्य में शंखिनी, कानों की द्वारवासिनी; कपोलों की कालिका, कानों के मूल देश की शांकरी देवी रक्षा करें। नासिका की सुगन्धा, ऊपर के होंठ की चर्चिका, नीचे के होंठ की अमृत कला एवं जिह्वा की, सरस्वती देवी रक्षा करें। दांतों की कौमारी, कण्ठ की चण्डिका, गले की चित्रघण्टा, तालु प्रदेश की महामाया रक्षा करें। चिबुक की कामाक्षी, वाणी की सर्वमंगला, ग्रीवा की भद्रकाली, पृष्ठ अस्थियों की धनुर्धरी रक्षा करें। कण्ठ से बाहरी भाग की नीलग्रीवा, कण्ठनालिका की नलकूबरी, दोनों कंधों की खंगिनी एवं मेरे भुजाओं की वज्रधारिणी रक्षा करें। दोनों हाथों की दंडिनी, अंगुलियों की अम्बिका, नाखूनों की शूलेश्वरी, कुक्षि की कुलेश्वरी रक्षा करें। हृदय की ललिता

देवी, उदर की शूलधारिणी रक्षा करें। स्तनों की मद देवी, मन की शोक विनाशिनी, नाभि की कामिनी, गुप्त इन्द्रिय की गुह्येश्वरी, लिंग की पूतकामिनी, गुदा की महिषवाहिनी रक्षा करें। कटि की भगवती, घुटनों की विन्ध्यवासिनी, जंघाओं की महाबली देवी रक्षा करें। गुल्फों की नारसिंही, पांव के तलुओं की तेजसी, अंगुलियों की श्रीधरीदेवी और तलुओं की पर्वतवासिनी रक्षा करें। नाखूनों की दंष्ट्रा-कराली, केशों की ऊर्ध्वकेशिनी, रोम छिद्रों की कौमारी और त्वचा की वागीश्वरी रक्षा करें। रक्त, मज्जा, वसा, मांस, अस्थियों एवं मेदे की पार्वती, अन्तड़ियों की कालरात्रि, पित्त की मुकुटेश्वरी रक्षा करें। पद्मकोष की पद्मावती, कफ की चूड़ामणि, नाखूनों की तेज की ज्वालामुखी, सभी सन्धियों की अभेद्या देवी रक्षा करें। हे ब्राह्मणी! आप मेरे वीर्य की रक्षा करें, छाया की छत्रेश्वरी और मन, बुद्धि अहंकार की धर्मधारिणी रक्षा करें। प्राणों की कल्याणशोभना और शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध इन पांच इन्द्रियों की योगिनी, सत्व, रज, तम की नारायणी सर्वदा रक्षा करें। आयु की वाराही, धर्म की वैष्णवी, यश एवं कीर्ति की लक्ष्मी तथा धन विद्या की चक्रिणी रक्षा करें। इन्द्राणी मेरे गोत्र की, चण्डिका मेरे पशुओं की, महालक्ष्मी मेरे पुत्रों की, भैरवी भार्या की रक्षा करें। मेरे पथ की सुपथा, मार्ग की क्षेमंकरी, राजा के दरबार में महालक्ष्मी एवं सभी दिशाओं में स्थिर होकर विजया मेरी रक्षा करें। और जो भी स्थान कवच में नहीं आये और जो अरक्षित हैं उन स्थानों की पापनाशिनी जयन्ती देवी रक्षा करें। मनुष्य आदि अपना मंगल चाहता है तो एक कदम भी बिना कवच कहीं न जाये। कवच से नित्य रक्षित मनुष्य जहां जहां भी जाता है, वहीं से उसे धन का

लाभ तथा सभी कामनाओं की सिद्धि प्राप्त होती है। पृथ्वी पर उस पुरुष को ऐश्वर्य एवं अतुल सम्पत्ति प्राप्त
होती है। वह मनुष्य निर्भय हो जाता है, युद्ध भूमि में कोई भी उसे नहीं जीत सकता, त्रिलोक भर में पूजा
जाता है। यह देवी कवच देवताओं को दुर्लभ है। इसको अत्यन्त श्रद्धा के साथ सावधान होकर जो तीनों
सन्ध्याओं में नित्य पढ़ लेता है, उसे देवीकला प्राप्त होती है। उसे अकाल मृत्यु नहीं आती, वह सौ वर्ष से
भी अधिक आयु पाता है। यह कवच उसका तेज, यश और कीर्ति बढ़ा देता है। चण्डी पाठ करने वाला
पहले कवच पाठ कर ले। जब तक पर्वत, वन काननों के साथ यह पृथ्वी टिकी रहती है, तब तक ऐसे पुरुष
की सन्तति होने पर महामाया की कृपा से देव दुर्लभ परम स्थान की प्राप्ति होती है। कवच का पाठ करने
वाला सुन्दर रूप को पाकर सदाशिव के साथ आनन्द पाता है।

श्री अर्गला स्तोत्र

श्री मार्कण्डेय जी बोले—जयन्ती, मंगला, काली, भद्रकाली, कपालिनी, दुर्गा, क्षमा, शिवा, धात्री,
स्वाहा, स्वधा आदि देवियों को मेरा नमस्कार हो। हे चामुण्डे देवी! समस्त प्राणियों के दुःख निवारण करने
वाली आपकी जय हो। सर्वव्यापक देवी कालरात्रि! आपकी जय हो। मधु तथा कैटभ दैत्यों का दलन करने
वाली, ब्रह्मा जी को वर देनेवाली, आपको नमस्कार हो। हे देवी! आप मुझे सुन्दर रूप दो, जय दो, यश
दो तथा क्रोधादि शत्रुओं का नाश करो। महिषासुर का नाश करने वाली, भक्तों की सुखदाता देवी जी को

नमस्कार हो। मुझे सुन्दर रूप दो, जय दो, यश दो, शत्रुओं का नाश करो। हे रक्तबीज का वध करने वाली देवी और चाण्ड-मुण्ड असुरों का विनाश करने वाली माता! मुझे सुन्दर रूप दो, जय दो, यश दो शत्रुओं का वध करो! हे पाप नाशक चण्डिके! जो सर्वदा भक्तिपूर्वक आपके चरणों में मस्तक झुकाते हैं उन्हें रूप दो, जय दो, यश दो, शत्रुओं का नाश करो। सभी व्याधियों का नाश करने वाली चण्डिके: जो आपकी भक्तिपूर्वक स्तुति करते हैं उन्हें रूप दो, जय दो, यश दो, शत्रुओं का नाश करो। हे देवीजी! आप मुझे सौभाग्य, आरोग्य और परमसुख दो, रूप दो, जय दो शत्रुओं का विध्वंस करो। मेरा कल्याण कीजिये और उत्तम धन सम्पत्ति दीजिये, रूप दो, जय दो, यश दो, शत्रुओं का नाश करो। हे माता! आपके चरणों पर देवता और दैत्य दोनों ही अपने मुकुट की मणियां घिसते रहते हैं। हे मातेश्वरी! अपने भक्त को विद्यावान, यशवान्, लक्ष्मीवान् करो। बड़े-बड़े अभिमानी दैत्यों के अभिमान चूर्ण काने वाली चण्डिके! मैं आपको प्रणाम करता हूं। हे चार भुजाओं वाली माता! चतुर्मुख ब्रह्माजी, आपकी स्तुति करते हैं। हे परमेश्वरी! रूप दो, जय दो, यश दो बैरियों का विध्वंस करो। श्री पार्वती के पति महादेव जी से स्तुत्य हे परमेश्वरी! रूप दो, जय दो, यश दो, शत्रुओं का नाश करो। हे देवी आप तो कठोर भुजदण्ड रखने वाले दैत्यों का भी घमण्ड नाश कर देती हो। हे अम्बिके! आप अपने भक्तों के लिए अपार आनन्द की वृद्धि करती हो। मुझे रूप दो, जय दो, यश दो, शत्रुओं का नाश करो, हे मातेश्वरी जी! आप मुझे वह पत्नी प्रदान करें जो मेरी इच्छाओं के अनुकूल हो और इस भयानक संसार रूपी समुद्र से मुझे तारने वाली हो, उत्तम कुल में उत्पन्न

हो। जो पुरुष, इस अर्गला स्तोत्र का पाठ करके महास्तोत्र (कीलक) का पाठ करता है, वह सप्तशती के पाठ जप से मिलने वाले वर एवं श्रेष्ठ सम्पदा के फल को प्राप्त कर लेता है।

श्री कीलक स्तोत्र

ॐ मैं उन भगवान सदाशिव को नमस्कार करता हूं, जिनके तीन दिव्य नेत्र हैं, जिनका शरीर विशुद्ध ज्ञान-स्वरूप है, जो मोक्ष प्राप्ति के कारण हैं, अर्ध चन्द्रमा जिनके मस्तक पर शोभायमान है। श्री मार्कण्डेय ऋषि बोले– मन्त्रों के शाप एवं उत्कीलन आदि को समझकर पाठ करने वाला पुरुष मोक्ष पा लेता है, अत: इसका ज्ञान होना आवश्यक है। सब उच्चाटनादि वस्तुयें इसी स्तोत्र द्वारा पाठ करके सिद्ध होती हैं और जो इस स्तोत्र का पाठ करके, सप्तशती के पाठमात्र से स्तुति करते हैं, उन्हें देवी जी सिद्ध हो जाती हैं। उच्चाटनादि प्रयोगों से उन पुरुषों को मन्त्र, औषधि आदि किसी अन्य साधन की आवश्यकता नहीं पड़ती, बिना जप के भी सभी उच्चाटनादि सिद्ध हो जाते हैं। क्या समस्त उच्चाटनादि इसी से सिद्ध हो जाते हैं? इस प्रकार की लोगों की शंका हुई, तब उस शंका के निवारण के लिये सदाशिव ने लोगों को बुलाकर आज्ञा दी– यह सब सिद्धियां देने वाला शुभ स्तोत्र है। इस चण्डिका स्तोत्र को भगवान सदाशिव ने गुप्त कर दिया। इस स्तोत्र के पाठ द्वारा प्राप्त होने वाला पुण्य कभी समाप्त नहीं होता। साधक सभी प्रकार का

क्षेम प्राप्त कर लेता है, इसमें कोई भी संशय नहीं। कृष्णपक्ष की चतुर्दशी अथवा अष्टमी के दिन एकाग्र होकर जो अपना सब कुछ भगवती को अर्पण करता है और फिर प्रसाद रूपेण ग्रहण कर लेता है, उस पर भगवती प्रसन्न होती है। इसी रूप के कीलक द्वारा महादेव ने इसे भी कीलन कर दिया है। जो इसके द्वारा सप्तशती का नीष्कीलन करके स्पष्ट होकर नित्य पाठ करता है, वह सिद्ध हो जाता है। जो देवी जी का गण एवं गन्धर्व होता है वह कहीं भी घूम रहा हो उसे कोई भय नहीं होता, न उसकी अकाल मृत्यु होती है, देहान्त होने पर वह मोक्ष पाता है। इसके लिये इस कीलक स्तोत्र को समझकर तथा उसका उत्कीलन करके पाठ करना उचित है। जो इस प्रकार नहीं करता उसका नाश होता है। तभी तो बुद्धिमान इसे समझकर ही उत्कीलन से सम्पन्न स्तोत्र का पाठ आरम्भ करते हैं। जो कुछ भी रमणियों में सौन्दर्य सौभाग्य आदि दिखाई देते हैं, ये सबके सब श्री देवी के कृपा के फल हैं। इसी कारण इस शुभ-स्तोत्र का जप सदा करते रहना चाहिये। इस स्तोत्र के मन्द-स्वर में पाठ करने से थोड़ा फल मिलता है। उच्च-स्वर में अधिक फल मिलता है। सभी सिद्धियां प्राप्त होती हैं। अतः उच्च स्वर में पाठ से याद करें। जिस भगवती की कृपा द्वारा सौभाग्य, आरोग्य, सम्पत्तियां, शत्रु नाश तथा परम-मोक्ष की प्राप्ति होती है, उसे जगत् की माता की स्तुति करनी चाहिये।

रात्रि सूक्त

महत्त्वादिरूप व्यापक इन्द्रियों से सब देशों में समस्त वसतुओं को प्रकाशित करने वाली ये रात्रिरूपा देवी अपने उत्पन्न किये हुये जगत् के जीवों के शुभाशुभ कर्मों को विशेष रूप से देखती है और उनके अनुरूप फल की व्यवस्था करने के लिये समस्त विभूतियों को धारण करती है। ये देवी अमर हैं और सम्पूर्ण विश्व को, नीचे फैलने वाली लता आदि को तथा ऊपर बढ़ने वाले वृक्षों को भी व्याप्त करके स्थित हैं; इतना ही नहीं, हे ज्ञानमयी ज्योति से जीवों के अज्ञानान्धकार का नाश कर देती हैं। परा चित् शक्तिरूप रात्रिदेवी आकर अपनी बहिन ब्रह्मविद्यामयी उषादेवी को प्रकट करती हैं, जिससे अविद्यामय अन्धकार स्वतः नष्ट हो जाता है। वे रात्रिदेवी इस समय मुझ पर प्रसन्न हों, जिनके आने पर हम लोग अपने घरों में सुख से सोते हैं– ठीक वैसे ही जैसे रात्रि के समय पक्षी वृक्षों पर बनाये हुये अपने घोंसलें में सुखपूर्वक शयन करते हैं। उस करुणामयी रात्रिदेवी के अंक में सम्पूर्ण ग्रामवासी मनुष्य, पैरों से चलने वाले गाय, घोड़े आदि पशु, पंखों से उड़नेवाले पक्षी एवं पतंग आदि, किसी प्रयोजन से यात्रा करने वाले पथिक और बाज आदि भी सुख पूर्वक सोते हैं। हे रात्रिमयी चित् शक्ति! तुम कृपा करके वासनामयी वृकी तथा पापमय वृक को हमसे अलग करो। काम आदि तस्कर समुदाय को भी दूर हटाओ। तदनन्तर हमारे लिये सुखपूर्वक तरने योग्य हो जाओ-मोक्षदायिनी एवं कल्याणकारिणी बन जाओ। हे ऊषा! हे रात्रि की अधिष्ठात्री देवी! सब

ओर फैला हुआ यह अज्ञानमय काला अन्धकार मेरे निकट आ पहुंचा है। तुम इसे ऋण की भांति दूर करो-जैसे धन देकर अपने भक्तों को ऋण दूर करती हो, उसी प्रकार ज्ञान देकर इस अज्ञान को भी हटा दो। हे रात्रिदेवी! तुम दूध देने वाली गौ के समान हो। मैं तुम्हारे समीप आकर स्तुति आदि से तुम्हें अपने अनुकूल करता हूं। परम व्योम स्वरूप परमात्मा की पुत्री! तुम्हारी कृपा से मैं काम आदि शत्रुओं को जीत चुका हूं, तुम स्तोम की भांति मेरे इस भविष्य को भी ग्रहण करो।

दूसरा दिन

२. ब्रह्मचारिणी

दधाना करपद्माभ्यामक्षमालाकमण्डलू।
देवी प्रसीदतु मयि ब्रह्मचारिण्यनुत्तमा।।

मां दुर्गा की नव शक्तियों का दूसरा स्वरूप ब्रह्मचारिणी का है। यहां 'ब्रह्म' शब्द का अर्थ तपस्या है। ब्रह्मचारिणी अर्थात् तप की चारिणी-तप का आचरण करने वाली। ब्रह्मचारिणी देवी का स्वरूप पूर्ण

ज्योतिर्मय एवं अत्यन्त भव्य है। इनके दाहिने हाथ में जप की माला एवं बाएं हाथ में कमण्डलु रहता है। मां दुर्गा जी का यह दूसरा स्वरूप भक्तों और सिद्धों को अनन्त फल देने वाला है। इनकी उपासना से मनुष्य में तप, त्याग, वैराग्य, सदाचार, संयम की वृद्धि होती है। दुर्गा पूजा के दूसरे दिन इन्हीं के स्वरूप की उपासना की जाती है। इस दिन साधक का मन 'स्वाधिष्ठान' चक्र में स्थित होता है। इस चक्र में अवस्थित मन वाला योगी उनकी कृपा और भक्ति प्राप्त करता है।

पाठ प्रारम्भ

पहला अध्याय

(भगवती की महिमा व मधुकैटभ वध)

महर्षि मार्कण्डेय जी बोले– भगवान सूर्य के पुत्र सावर्णि की उत्पत्ति की कथा को मैं विस्तार से कहता हूं, आप ध्यान से सुनिये। प्राचीनकाल में स्वारोचिश मन्वन्तर के चैत्रवंशी राजा सुरथ समस्त पृथ्वी के चक्रवर्ती राजा हुये। यवन राजाओं से राजा सुरथ की शत्रुता हो गई, दुष्टदलन राजा सुरथ से उनका भयंकर युद्ध हुआ

और थोड़ी सेना होने के कारण यवन राजाओं ने सुरथ को हरा दिया। तदनन्तर राजा अपने नगर में आकर राज्य करने लगा, तो भी अन्य शत्रु राजाओं ने राजा सुरथ पर चढ़ाई कर दी और नगर में भी दुराचारी मन्त्रियों ने राजा का कोष, सैन्य तथा समस्त वस्तुयें छीन लीं। तब राजा हारकर अकेला ही घोड़े पर सवार हो शिकार खेलने के बहाने घोर जंगल में चला गया। वहां उन्होंने महर्षि मेधा का सुन्दर आश्रम देखा जो अहिंसक सिंह आदि पशुओं तथा शिष्यों और मुनियों से शोभित था। वहां बैठे हुये महर्षि मेधा को राजा सुरथ नमस्कार किया।

कुछ काल के बाद फिर वह अपने राज्य तथा प्रजा की चिन्ता से विचारने लगा कि जिस राज्य को मेरे पूर्वजों ने भली-भांति चलाया और प्रजा का पालन किया वह आज मुझसे दूर चला गया। वे दुष्ट मन्त्री राज्य का पालन धर्म-नीति के अनुसार कर रहे होंगे या नहीं। जो आज्ञाकारी नौकर, नित्य प्रसन्नता से धन और भोजन प्राप्त करते थे, अब उन दुष्ट राजाओं के आश्रय में रहकर कष्ट पाते होंगे।

कुछ समय पश्चात् एक दिन आश्रम के समीप एक वैश्य को आते देखा तो राजा ने उससे पूछा कि अरे भाई! तुम कौन हो और यहां क्यों आये हो? तुम्हारा मलिन मुख शोकयुक्त क्यों दिखाई देता है? राजा सुरथ ने कहा कि हे राजन्! मैं समाधि नाम का एक वैश्य हूं। मेरा जन्म धनवान कुल में हुआ है, मेरे दुष्ट स्त्री व पुत्र आदि ने मुझे धन के लोभ से घर से निकाल दिया है और मेरा धन छीन लिया है। मैं धन, स्त्री. पुत्र से रहित हूं। अब अकेला दुःखी होकर इस वन में आया हूं। मैं यहां रहने के कारण अपनी स्त्री, पुत्र

तथा स्वजनों की परिस्थिति को नहीं जानता कि सदाचारी हैं या व्याभिचारी। राजा बोला- जिन स्त्री पुत्रादि ने तेरी धन सम्पत्ति को छीन लिया है, फिर उन्हीं के स्नेह में तेरा मन क्यों जाता है? वैश्य बोला- जिन पुत्रादि ने धन के लोभ में आकर मुझे घर से निकाल दिया है, मेरा चित्त फिर भी उन्हीं में आसक्त होता है। मैं क्या करूं? इन स्वजनों के निर्मोही होने पर भी मेरे मन में उनके प्रति प्रेम है। मार्कण्डेय ऋषि बोले- हे द्विजश्रेष्ठ! तत्पश्चात् राजा सुरथ और समाधि वैश्य दोनों मिलकर मेधा मुनि के समीप जाकर प्रणाम करके बैठ गये और मेधा ऋषि से कथा प्रसंग करने लगे।

राजा बोला-हे भगवान! मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूं। हे महाराज! मेरा मन वश में नहीं है। गये हुये राज्य तथा अन्य सभी स्त्री पुत्र बांधवों की ममता मुझे अभी तक बनी हुई है। हे मुनिश्रेष्ठ! यह जानते हुए भी मेरा स्नेह उनसे अज्ञानियों की भांति विशेष बढ़ता जाता है। यह भी उनमें अत्यंत आस्क्त रहता है, इसी तरह हम दोनों बहुत दु:खी हैं। हे महाभाग! उनके दोषों को जानते हुए भी हम दोनों का हृदय उनके प्रति ममता से आसक्त रहता है। इतना ज्ञान होते हुए भी ऐसी ममता क्यों हैं? हम दोनों को अज्ञानियों की भांति मूढ़ता क्यों उत्पन्न हो रही है?

महर्षि मेधा ने कहा-समस्त जन्तुओं को जानने योग्य ज्ञान होता है। हे महाभाग! सभी प्राणी पृथक-पृथक होते हैं, कोई दिन में नहीं देखते तो कोई रात्रि में नहीं देखते और कोई दिन-रात्रि में समान

दृष्टि से देखते हैं। पुरुष ज्ञान-युक्त है, यह सत्य है, इसमें सन्देह नहीं। केवल इसमें ही नहीं सभी पशु-पक्षी मृगादि में भी मनुष्य की भांति ही ज्ञान होता है। यह स्थूल ज्ञान होता है। जैसे मनुष्यों में आहार आदि की इच्छा उत्पन्न होती है वैसे ही पशु-पक्षी आदि में आहार-विहार; निद्रा में मैथुन आदि की इच्छा उत्पन्न होती है। ज्ञान होने पर भी पक्षियों को तो देखो, भूखे होने पर भी ममता वश अपने बच्चों को चोंच में स्नेह से चुगा देकर प्रसन्न होते हैं। हे राजन्! मनुष्य भी अपने पुत्र-पौत्रों से इसी भांति बर्ताव करते हैं। वह पालन-पोषण वे करेंगे। क्या तुम यह नहीं देखते कि पुत्रादि उनका भरण-पोषण न भी करें तो भी माता-पिता तो करते ही हैं, क्योंकि विश्व की स्थिति को रखने वाली महामाया के प्रभाव से वे मोह के गढ्ढे में डाल दिये गये हैं। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है क्योंकि यह भगवान विष्णु की योगनिद्रा है। जिससे संसार मोहित हो जाता है। यही भगवान् की महामाया है। वह भगवती देवी बड़े-बड़े ज्ञानियों के चित्त को जबरदस्ती खींच कर मोह में डाल देती है। इस देवी ने ही चराचर विश्व को उत्पन्न किया है और यह देवी प्रसन्न होकर भक्तों को वरदान देती है जिससे मुक्ति मिलती है। वहीं मुक्ति की परम हेतु सनातनी ब्रह्मज्ञान स्वरूपा विद्या है।

यह भगवती देवताओं के कार्य सिद्ध के लिये उत्पन्न होती है और अजन्मा होकर भी उत्पन्ना कहलाती है। जब भगवान विष्णु विश्व को त्याग, अनन्त में जल ही जल करके योगनिद्रा में शेष-शय्या पर शयन

कर रहे थे उस समय विख्यात मधु और कैटभ नाम के दो घोर असुर भगवान् विष्णु के कान की मैल से पैदा होकर ब्रह्माजी को मारने को तैयार हुये। ब्रह्माजी विष्णु भगवान् के नाभि-कमल पर स्थित थे। उन दोनों भयंकर असुरों को मारने को आते देखकर औश्र भगवान् विष्णु को सोता हुआ देखकर, ब्रह्माजी योगनिद्रा की प्रसन्नतार्थ एकाग्रमन से स्तुति करने लगे जिससे कि भगवान् विष्णु के नेत्रों से भगवती योगमाया अपना प्रभाव हटा ले और भगवान जाग पड़ें। वह योगमाया विश्वेश्वरी, जगत्माता, स्थिति एवं संहार करनेवाली, भगवान विष्णु की अतुल तेज वाली निद्रा-स्वरूपा अनुपम शक्ति है। ब्रह्माजी बोले—हे महामाये! तुम स्वाहा (देवताओं को पालने वाली) हो, तुम स्वधा (पित्रेश्वरों का पोषण करने वाली) हो, तुम ही वषट्कार स्वर (इन्द्र को यज्ञ का हिस्सा पहुंचाने वाली) हो। अमृत भी तुम ही हो, अक्षरों में स्वर तुम्हीं हो तथा नित्य आध ी मात्रा (व्यंजन) तुम ही हो। हे देवी! तुम ही सन्ध्या, सावित्री और संसार की जननी हो और हे मातेश्वरी! विश्व को उत्पन्न, पालन और संहार करने वाली आप ही हो। आप ही महाविद्या, महादेवी, महासुरी हो, आप ही समस्त चराचर के तीनों गुणों (सत्त्व, रज, तम) को उत्पन्न करने वाली प्रकृति हो। आप ही कालरात्रि हो, आप खड्ग, त्रिशूल, घोर, गदा, चक्र, शंख, धनुष-बाण, भुशुण्डी, परिद्य आदि अस्त्र-शस्त्रों को धारण करने वाली हो। हे देवी! आप ही सौम्यता हो तथा संसार में आप ही अति सुन्दर हो। पर तथा अपरों में श्रेष्ठ आप ही परमेश्वरी हो। जो इस विश्व की रचना और पालन संहार करते हैं उन भगवान्

विष्णु को आपने अपनी निद्रा के वश में कर लिया है, फिर भला बताइये कि कौन आपकी प्रार्थना करने में समर्थ है जबकि आपने भगवान् विष्णु, ईशान (शंकर) तथा मुझसे यह शरीर ग्रहण कर लिया है। आप मोह लीजिये और विश्वपति भगवान् विष्णु को जगाइए। इन दोनों महाअसुरों का संहार करने के लिये भगवान् को बुद्धि दीजिये।

ऋषि बोले– इस प्रकार जब ब्रह्माजी ने मधु और कैटभ असुरों के संहार के लिये तथा विष्णु को जगाने के लिए तामसी देवी की प्रार्थना की तो उसी समय भगवान् विष्णु के नयन, मुख, नाक, भुजा, हृदय और वक्षस्थल से निकलकर अव्यक्त योगमाया उपस्थित हो गई और योगनिद्रा से भगवान् जाग गये। तदन्तर भगवान् विष्णु ने उन पराक्रमी वीर्यवान मधु और कैटभ असुरों को देखा जिनकी ब्रह्माजी को खाने के लिए आंखें लाल हो रही थी। तब भगवान् विष्णु ने शेष-शय्या से उठकर उन असुरों से पांच हजार वर्ष तक बाहु-युद्ध किया। अति बलशाली महा उन्मत्त दोनों असुरों को महामाया ने मोहित कर रखा था। अतः दुष्टों ने भगवान् से कहा कि आप हमसें वरदान मांगो। भगवान ने कहा यदि तुम मुझ पर प्रसन्न हो तो "मेरे हाथों तुम्हारी मृत्यु हो" मैं तो केवल यही वर चाहता हूं। ऋषि ने कहा– इस भांति जब भगवान ने उनसे वरदान ले लिया तो वे भगवान् से कहने लगे कि हमें सर्वत्र जल-ही-जल दिखाई देता है। इसलिये हे भगवान्! हमारा वध उस स्थान पर कीजिये जिस जगह पर पानी न हो। ऋषि मेधा ने कहा–तब भगवान् विष्णु ने शंख, चक्र और गदा धारण किये और उनसे 'तथस्तु' कहा और दोनों के सिर अपनी जांघों पर

रखकर चक्रम से काट दिये। इस प्रकार यह महामाया देवी श्री ब्रह्माजी की प्रार्थना करने पर स्वयं उत्पन्न हुई है। हे राजन्! मैं अब इसके प्रभाव को बताता हूं, आप ध्यान से सुनो।

दूसरा अध्याय

(देवी जी का प्रादुर्भाव व महिषासुर की सेना का वध)

ऋषि बोले–प्राचीन काल में देवी-देवता तथ दैत्यों में पूरे सौ वर्ष युद्ध होता रहा। उस समय दैत्यों का स्वामी महिषासुर था एवं देवताओं का इन्द्र था। उस संग्राम में देवताओं की सेना महाबली दैत्यों से हार गई। तब सभी देवताओं को जीतकर महिषासुर इन्द्र बन बैठा। तब हारकर सभी देवता ब्रह्माजी को अग्रणी बनाकर वहां गये जहां विष्णु तथा शंकर विराज रहे थे, वहां पर देवताओं ने महिषासुर के सभी उपद्रव एवं अपने पराभव आदि का पूरा-पूरा वृत्तान्त कह सुनाया। उन्होंने कहा कि महिषासुर ने तो सूर्य, अग्नि, पवन, चन्द्रमा, यम तथा वरुण इत्यादि अन्य सभी देवताओं के अधिकार छीन लिये हैं, स्वयं ही सबका अधिष्ठाता बन बैठा है। उसने सभी देवताओं को स्वर्ग से निकाल दिया, महिषासुर महा दुरात्मा है, उसके वध का कोई उपाय कीजिये! इस प्रकार मधुसूदन तथा महादेवी जी ने देवताओं के वचन सुने तो क्रोध से उनकी भौंहें

तन गईं। तब भगवान विष्णु के मुख से एक महान् तेज प्रकट हुआ। इसी प्रकार ब्रह्मा तथा शंकर के मुख से तेज प्रकट हुँआ। दूसरे इन्द्र आदि देवताओं के शरीर से भी महान् तेज प्रकट हो आया, सभी तेज मिलकर एक हो गये। वह तेज पुञ्ज इतना उग्र था जैसे कि जलता हुआ पहाड़ हो। देवताओं ने देखा कि उसकी ज्वालायें सभी दिशाओं में फैल रही हैं। जब वह एक हुआ तो नारी के रूप में आ गया। महादेव जी के तेज से उसका मुख प्रकट हुआ, यम के तेज से उसके केश हुये, विष्णु के तेज से उस देवी की भुजायें प्रकट हुईं। चन्द्रमा से दोनों स्तन, इन्द्र के तेज से उसका कटि-प्रदेश, वरुण के तेज से जंघा व उरुस्थल, पृथ्वी के तेज से नितम्बों का प्रादुर्भाव हुआ। ब्रह्मा के तेज से दोनों चरण, सूर्य की तेज से चरणों की अंगुलियों, वसुओं की तेज से हाथों की अंगुलियां, कुबेर की तेज से नासिका का आविर्भाव हुआ। उसके दांत प्रजापति के तेज से दोनों कान उत्पन्न हुये। इसी प्रकार समस्त देवताओं के तेज द्वारा भगवती का प्रादुर्भाव हुआ। इस प्रकार सभी देवताओं के तेज-पुंज से प्रकट हुई देवी जी को देखकर महिषासुर से पीड़ित समस्त देवता प्रसन्न हुये। महादेवी ने देवी को अपने त्रिशूल से शूल निकालकर दे दिया, श्री विष्णु जी अपना सुदर्शन-चक्र प्रकट करके दिया। वरुण ने शंख तथा अग्नि ने उसे शक्ति दी, मारुत ने उन्हें धनुष दिया और बाणों से भरपूर दो तरकस दे दिये। देवराज इन्द्र ने अपने वज्र से वज्र पैदा करके दिया। फिर सहस्रनेत्र इन्द्र ने ऐरावत हाथी से घण्टा दिया, यमराज ने कालदण्ड से दण्ड प्रदान किया। सागरपति ने रुद्राक्ष माला अर्पित की, ब्रह्मा ने कमण्डलु भेंट किया। सूर्य ने भगवती के भी रोमकूपों में अपनी किरणें

प्रदान कीं। काल ने तलवार और उत्तम ढाल अर्पण की, क्षीरसागर ने हार तथा कभी न पुराने होने वाले
दो वस्त्र भेंट किये। इसी प्रकार चूड़ामणि, दिव्य कुमण्डल तथा दो कड़े भी भेंट किये तथा चमकता हुआ
अर्धचन्द्र, सभी भुजाओं के लिए बाजूबन्द, चरणों के लिए नूपुर और कण्ठ के लिये सर्वोत्तम कंठुला भेंट
किया। इसी प्रकार सभी अंगुलियों के लिये जड़ित-मुद्रिकायें प्रदान कीं। विश्वकर्मा ने निर्मल परशु भेंट
किया और उनके रूपों वाले अस्त्र, अभेद-कवच, मस्तक तथा गले में धारण करने के योग्य कभी न
कुम्हलाने वाली कमलों की माला दी। जलधि ने उसे बहुत सुन्दर कमल दिया। हिमालय ने वाहन के लिये
सिंह एवं और भी अनेक प्रकार के रत्न भेंट किये। कुबेर ने सुरा से भरपूर पात्र दिया। सभी नागों के स्वामी
एवं सारे देवताओं ने भी भूषण एवं आयुधों के द्वारा देवी जी का सत्कार किया। तत्पश्चात् भगवती ने
अट्टाहस करके ऊंचे स्वर में गर्जना की।

इधर देवताओं के शत्रुओं ने सारी त्रिलोकी को क्षोभग्रस्त देखा, तब तो वे अपनी सारी सेना को कवच
आदि से तैयार कराकर अस्त्र-शस्त्र लेकर झट उठ खड़े हुये। महिषासुर क्रोध में आकर बोला- अरे यह
क्या हो रहा है? इतना कहकर सभी दैत्यों के साथ घिरकर उस सिंहनाद की ओर भागा। वहां जाकर उसने
तीनों लोकों को अपने तेज से प्रकाशित करती हुई देवी को देखा। उस देवी के चरणों के भार से पृथ्वी दबी
जा रही थी। माथे के किरीट (मुकुट) से आकाश पर रेखायें पड़ती जा रही थीं, उसके धनुष की टंकार
से सातों पाताल क्षोभग्रस्त थे हजारों भुजाओं से भी सभी दिशाओं को ढककर देवी खड़ी हुई थी। देवी जी

के साथ उन दैत्यों का युद्ध आरम्भ हो गया। महिषासुर का सेनापति उस समय चिक्षुर नाम का एक दैत्य था। देवी जी के साथ उसी का युद्ध होने लगा। इसी प्रकार अन्य दैत्यों को यथा चतुरांगिनी सेना को साथ लेकर चामर भी युद्ध होने लगा साठ हजार रथियों को साथ लेकर उदग्र महादैत्य भी युद्ध में प्रवृत्त हो गया। महाहनु दैत्य पांच करोड़ रथियों के साथ युद्ध में आ गया। साठ लाख रथियों से आवृत्त वाष्कल दैत्य युद्ध में उतर पड़ा। पारिवारित दैत्य हाथी एवं घोड़ों के अनेकों सवारों के समूह से घिरा हुआ रथियों को साथ लाकर देवीजी के सज्ञथ युद्ध करने लगा। उस रणांगन में स्वयं महिषासुर भी रथों, हाथियों एवं अश्वों की सेनाओं से घिरा खड़ा था, तोमर, भिन्दिपाल, शक्ति, मूसल, परशु, पट्टिश, खंग आदि अस्त्रों से युद्ध में देवी जी के सज्ञथ युद्ध करने लगे। कुछ दैत्यों ने देवीजी पर शक्तियां छोड़ी एवं दूसरों ने पाश फेंके। तब चण्डिका देवी ने अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करके उन्हें तोड़ डाला, इधर देवी जी का वाहन सिं भी क्रोध में आ गया, अपने गर्दन के बाल हिलाता हुआ दैत्यों की सेना में इस प्रकार घूमने लगा जैसे कि वन में अग्नि फैलती जा रही हो। उस युद्ध भूमि में युद्ध करती हुई अम्बिका ने जितने श्वाँस छोड़े, वे ही झटपट सैकड़ों हजारों गणों के रूप में परिणित हो गये, प्रकट होकर उन गणों ने खंग भिन्दिपाल, परशु, पट्टिश आदि शस्त्रों से युद्ध प्रारम्भ कर दिया। देवी जी की शक्ति से वृद्धि पाकर वे गण दैत्यों का नाश करने लगे। तब देवी जी ने त्रिशूल, गदा और शक्तियों की वर्षा से तलवार आदि शस्त्रों से सैकड़ों महान असुर मार डाले और दूसरे कितने ही दैत्यों को घण्टा के भयप्रदनाद से मूर्छित करके मार कर गिरा दिया। मरे दैत्यों को

पाश से बांधकर पृथ्वी पर घसीट डाला। कितने ही दैत्यों की भुजायें कट गईं, कितनों की ग्रीवायें छिन्न-भिन्न हो गईं, कई दैत्यों के सिर कट गये, कुछ मध्य से विदीर्ण हो गये, कुछ दैत्यों की जंघायें कट गईं व पृथ्वी पर गिर गये और कुछ एक दैत्यों को तों एक भुजा एक आंख और एक पांव वाला करके दो टुकड़े कर डाला। मार-मारकर गिराये हुये रथी, हाथी; घोड़े एवं असुरों की लाशों के द्वारा, जहां महायुद्ध हो रहा था, वहां के पृथ्वी इस प्रकार भर गई कि वहां पर आना-जाना कठिन हो गया। वहां सेना एवं असुरों के रुधिर बहने से रुधिर की बड़ी-बड़ी नदियां बहने लगीं। जगदम्बा जी ने एक क्षण में ही दैत्यों की महती सेना का इस प्रकार नाश कर दिया जैसे कि लकड़ियों के बड़े ढेर को अग्नि जला देती है। देवी का वाहन सिंह अपने बालों को छटकाता हुआ बड़ी गर्जना करता हुआ, दैत्यों के शरीर से मानों प्राण ही चुन रहा हो इस प्रकार घूमने लगा। देवी जी के उन गणों ने महा असुरों के साथ बड़ा युद्ध किया जिससे देवता प्रसन्न होकर आकाश में पुष्पों की वर्षा करने लगे।

तीसरा दिन

3. चन्द्रघण्टा

पिण्डजप्रवरारुढा चण्डकोपास्त्रकैर्युता।
प्रसादं तनुते मह्यं चन्द्रघण्टेति विश्रुता।।

मां दुर्गाजी की तीसरी शक्ति का नाम 'चन्द्रघण्टा'

है। नवरात्रि उपासना में तीसरे दिन इन्हीं के विग्रह का पूजन-आराधना किया जाता है। इनका यह स्वरूप परम शान्तिदायक और कल्याणकारी है। इनके मस्तक में घण्टे के आकार का अर्धचन्द्र है, इसी कारण से इन्हें चन्द्रघण्टा देवी कहा जाता है। इनके शरीर का रंग स्वर्ण के समान चमकीला है। इनका वाहन सिंह है।

हमें चाहिए कि अपने मन, वचन, कर्म एवं काया को विहित विधि-विधान के अनुसार पूर्णत: परिशुद्ध एवं पवित्र करके मां चन्द्रघण्टा के शरणागत होकर उनकी उपासना-अराधना में तत्पर हों। उनकी उपासना से हम समस्त सांसारिक कष्टों से विमुक्त होकर सहज ही परमपद के अधिकारी बन सकते हैं।

पाठ प्रारम्भ

तीसरा अध्याय

(महिषासुर का वध)

ऋषि बोले—महाअसुर चिक्षुर सेनापति ने जब यह देखा कि सेना तो इस प्रकार मारी जा रही है। तब उसे बड़ा क्रोध उत्पन्न हो गया और वह स्वयं भी अम्बिका के साथ युद्ध करने निकल पड़ा। युद्ध में जाकर उसने देवी जी पर बाणों की इस प्रकार वर्षा की जैसे मेघ सुमेरु पर्वत की चोटी पर जाकर जलधारा बरसा रहा हो। तब देवी ने उसके बाण समूहों का खेत में ही काट दिया। फिर बाणों द्वारा उसके सारथी, घोड़ों को मार डाला, फिर झटपट उसका धनुष और ऊंची लहराती ध्वजा काटकर गिरा दिये। जब उसका धनुष कट चुका था, तब वह बिना रथ के पैदल तलवार ढाल लेकर देवी के रथ की ओर दौड़ा, तेज तलवार से सिंह पर जाते ही प्रहार कर दिया, फिर देवी जी की वाम भुजा पर जोर से प्रहार किया। हे राजन्! ज्यों ही उसकी तलवार देवी की भुजा पर पड़ी त्यों ही टूट गई। फिर असुर ने क्रोध से आंखें लाल-लाल करके

शूल पकड़ लिया, भद्रकाली जी पर उस दैत्य ने शूल डाल दिया। वह शूल इस प्रकार चमकता जैसे कि आकाश से सूर्य मण्डल गिर रहा हो। देवी जी ने अपनी ओर आते हुए शूल को देखकर उस पर अपना शूल चला दिया, जिससे वह शूल सैकड़ों टूकड़े हो गया, साथ मे उस चिक्षुर महादैत्य के प्राण निकल गये।

देवी जी ने शिला एवं वृक्ष आदि से युद्ध में उदग्र को मार डाला। फिर कराल को भी दांतों, मुक्का एवं थप्पड़ों के द्वारा मार गिराया। क्रोध में परिपूर्ण देवी ने गदा की चोटों से उद्धता को चूर-चूर कर दिया। भिन्दिपाल-शास्त्र द्वारा वाष्कल तथा बाणों द्वार उग्रवीर्य, महाहनु नाम के दैत्यों को त्रिशूल के द्वारा मार दिया। तलवार से विडाल कर सिर धड़ से अलग कर दिया, दुर्धर और दुर्मुख इन दोनों को बाणों द्वारा यमपुरी पहुंचा दिया। इस प्रकार अपनी सेना का नाश होता देखकर भैंसे का रूप बनाकर महिषासुर उन गणों को डराने लगा। कुछ एक गणों पर अपने थुथुनों से प्रहार किया। दूसरों को सींगों से फाड़ा। कुछ एक को वेग द्वारा, दूसरों को सिंहनाद द्वारा और घूमने से, अन्यों को श्वांस-वायु द्वारा पृथ्वी पर गिराया। इस प्रकार गण-सेना को गिराकर वह महिष सिंह की ओर झपटा। ज्यों ही सिंह को मारने लगा, तब जगदम्बा को बड़ा क्रोध उत्पन्न हुआ। इधर महापराक्रमी महिषासुर भी क्रोध से पृथ्वी-तल को अपने खुरों से खोदने लगा फिर सींगों से बड़े ऊंचे-ऊंचे पहाड़ उठाकर फेंकने लगा, साथ में गर्जने लगा। वेग के साथ घूमने पर पृथ्वी क्षुब्ध होकर फटने लगी। उसने पूंछ से समुद्र पर प्रहार किया, जिससे क्षुब्ध होकर समुद्र पृथ्वी को

चारों ओर से डुबोने लगा।

चलायमान होते हुए सींग के द्वारा छिन्न-भिन्न हुये बादल के टुकड़े-टुकड़े हो गये। उसके श्वासों की कठोर वायु से उड़ते हुये सैकड़ों पर्वत आकाश से गिरने लगे। इस प्रकार क्रोधपूर्ण उस महादैत्य को अपनी ओर आता देखकर चण्डिका उसे मारने के लिये क्रोध में आ गई। कुपित चण्डिका ने उसकी ओर पाश फेंका व उसके द्वारा उस दैत्य को बांध लिया। तब तो उस महायुद्ध में बंधे उस दैत्य ने अपने महिषासुर रूप का त्याग कर दिया। झटपट सिंह के रूप में आ गया।

ज्यों ही चण्डिका उसका सिर काटने लगी तब तो वह तलवार हाथ में लिये पुरुष दिखाई देने लगा। तब शीघ्रता से तलवार ढाल वाले इस पुरुष को अपने बाणों से देवी ने बींध डाला। अब वह एक बड़ा हाथी हो आया। अपनी सूंड़ से देवी के सिंह को खींचा फिर गर्जने लगा। उसके खींचते समय अपनी खड्ग के द्वारा देवी ने उसकी सूंड को काट दिया, फिर वह महादैत्य भैंसे के रूप में आ गया और चराचर त्रिलोकी को सताने लगा तो जगत्माता चण्डिका क्रोध में आकर फिर उत्तम मधूपान करने लगी और लाल-लाल नेत्र करके हंसने लगी। वह दैत्य भी बल पराक्रम के मद में उनमत्त होकर गर्जने लगा और अपने सींगों से पहाड़ उठा उठाकर देवी की ओर फेंकने लगा। देवी जी ने भी अपने बाणों के समूह से उसके फेंके हुये पर्वतों को चूर-चूर कर दिया। तब सुरापान के मद के कारण लाल-लाल नेत्र वाली चण्डिका जी ने कुछ

अस्त-व्यस्त शब्दों में कहा। देवीजी बोलीं–हे मूढ! जब तक मैं मधूपान कर लूं तब तक तू क्षण भर के लिये गरज ले, मेरे द्वारा संग्राम भूमि में तेरा वध हो जाने पर तो शीघ्र ही देवता भी गरजने लगेंगे।

ऋषि बोले–इस प्रकार कहकर देवी जी उछलकर उस महादैत्य पर चढ़ गयीं, पांव से दबाकर दैत्य के कण्ठ पर त्रिशूल से वार किया। देवी के पांव से दबे हुये उस दैत्य ने अपने मुख से बाहर निकलने का प्रयत्न दूसरे रूप में किया, अभी आधा निकल ही पाया था कि देवी जी ने अपने पराक्रम द्वारा उसे वहीं रोक लिया। आधा निकलकर भी उस दैत्य ने युद्ध करना नहीं छोड़ा। तब देवी जी ने अपना तेज तलवार से उसका सिर काटकर नीचे गिरा दिया। दैत्य सेना हा-हाकार करने लगी, तब उस सारी सेना का भी देवीजी ने नाश कर दिया, सभी देवता अत्यन्त प्रसन्न हुये। दिव्य महर्षियों के साथ सभी देवताओं ने स्तुतियां की। गन्धर्वराज गायन करने लगे, अप्सरायें नाचने लगीं।

चौथा अध्याय

(देवताओं द्वारा देवी की स्तुति)

ऋषि बोले– अत्यन्त पराक्रमी उस दुरात्मा महिषासुर एवं उसकी सेना के देवी द्वारा मारे जाने पर इन्द्र आदि देवतागण अपनी वाणियों द्वारा देवी जी की स्तुति करने लगे। जिस देवीजी ने अपनी शक्ति से सारे जगत् को व्याप्त कर लिया है, जिसका स्वरूप सभी देवताओं का समूह है, सभी देवता एवं महर्षि जिसकी पूजा किया करते हैं, उस अम्बिका देवी को हम प्रणाम करते हैं वही देवी हमारा मंगल करें। जिसके अतुल प्रभाव को एवं बल को भगवान् शेषनाग, ब्रह्मा तथा हरि भी नहीं कह सकते वही चण्डिका देवी सारे जगत् के पालन के लिये तथा अमंगल के भय के नाश का विचार करें।

जो श्रीस्वरूपिणी पुण्यात्माओं के घरों में तो लक्ष्मी स्वरूपा हैं, पापियों के घरों में दरिद्रता, पवित्र बुद्धिवालों के हृदय में बुद्धि, श्रेष्ठ पुरुष के यहां श्रद्धा, कुलीन मनुष्य में लज्जा-स्वरूपिणी हैं, इस प्रकार की हे देवी जी! हम आपको प्रणाम करते हैं। हे भगवती! आप विश्व का पालन करें, हे मातेश्वरी! आपके इस अचिन्त्य रूप का, असुरों के क्षय करने वाले आपके महान् पराक्रम का एवं देवता तथा असुरों के सामने संग्राम में किये गये आपके अद्भुत चरित्रों का वर्णन हम किस प्रकार कर सकते हैं।

हे भगवती! आप सम्पूर्ण जग का कारण हो। सत्व, रज, तम इन तीनों गुणों वाली होते हुये भी आप अज्ञेय हो। दोषों के कारण हमें लोग आपको जान ही नहीं सकते। हम तो क्या विष्णु, शिव आदि भी आपका पार नहीं पा सकते। आप सबकी आश्रय हो एवं आप आद्या, अव्याकृता, पराप्रकृति हो। हे देवीजी! सभी यज्ञों में, जिसके उच्चारण करने से सभी देवता तृप्त हों, आप ऐसा अचिन्त्य महाव्रत स्वरूप हो और सम्पूर्ण दोषों से रहित इन्द्रियों को वश में करने वाले तत्व को ही सार जानने वाले मोक्षार्थी मुनिजन जिसका अभ्यास करते हैं, वह देवी भगवती पराविद्या आप हो। आप शब्द-स्वरूपा हो। परम पवित्र ऋग्वेद, यजुर्वेद एवं मनोहर उद्‌गीथ के पदों के पाठ से युक्त सामवेद का आप निधान हो, वेदत्रयी देवी हो, छह गुणों से सम्पन्न आप भगवती हो। सभी शास्त्रों का ज्ञान कराने वाली हे देवी! आप मेधा हो, दुर्गम संसार रूप सागर से पार उतारने वाली नौकारूप दुर्गा हो। आप असंग हो, कैटभ दैत्य के शत्रु, विष्णु के वक्षस्थल पर निवास करने वाली आप लक्ष्मी स्वरूपा हो एवं चन्द्रमा को मस्तक पर धारण करने वाले भगवान शंकर से सम्मानित आप गौरी हो। यद्यपि आपका मुख सुन्दर तथा परिपूर्ण चन्द्रमा के बिम्ब का अनुकरण करने वाला एवं निर्मल मन्द मुस्कान से शोभित है। इस प्रकार के निर्मल मन्द मुस्कान से शोभित चन्द्रमुख को देखकर क्रोध से परिपूर्ण महिषासुर ने झट ही आप पर प्रहार किया। यह अद्‌भुत बात है। उससे भी अतीव अद्‌भुत एवं विचित्र बात तो यह है कि जब वह मुख क्रोध से युक्त था, उदय होते हुये चन्द्रमा की भांति लाल-लाल था, तनी हुई भौंहें अति विकराल थीं, ऐसा

देखकर महिषासुर ने अपने प्राण तुरन्त वहीं पर नहीं छोड़ दिये। भला ऐसा कौन सा प्राणी है जो क्रोधी यमराज को देखकर भी जीवित रह सके। हे देवीजी आप प्रसन्न हों, सर्वदा उन्नति-दाता देवी जी! आप जिन पर प्रसन्न हैं वे ही सभी देशों में आदर पाते हैं, उन्हें ही धन तथा यश मिलता है। हे देवी आपकी कृपा से उसे स्वर्ण लाभ होता हैं, इसी कारण आप तीनों लोकों में फल देने वाली हो। आपसे बढ़कर और कौन है? सबके लिये उपकार करने वाली हो, आप सर्वदा दयामयी हो, इन राक्षसों से वध करने से जगत् सुखी हो, ये राक्षस कभी नरक के लिये चिरकाल तक भले ही पाप करते रहे हों। संग्राम में इनका वध आपने इसलिये किया कि मुझसे मारे हुये ये स्वर्ग चले जायें। यही मन में रखकर हे देवी! आप पापियों का वध करती हो। आप असुरों को केवल देखने मात्र से भस्म क्यों नहीं करती, शत्रुओं पर शस्त्रों का प्रहार क्यों कर दिया करती हो? इसका भी कारण है, क्योंकि शत्रुगण मेरे शास्त्रों से मरकर पवित्र होकर उत्तम लोकों में पहुंचें। इस प्रकार आपके यह विचार अत्युत्तम हैं। आपका शील-स्वभाव दुराचारियों के दुष्ट स्वाभाव को निवृत्त करने वाला है और आपका रूप अचिन्त्य है उसकी अन्य किसी के साथ तुलना ही नहीं हो सकती। आपका पराक्रम की तुलना, हे देवी! किसके साथ हो सकती है? आपके रूप भी तो परम मनोहर हैं, परन्तु शत्रुओं को भयदायक हैं। हे वरदायिनी! त्रिलोकीभर में यह आप में ही दिखाई देते है। हे देवीजी! शत्रुओं का नाश करके इस सारी त्रिलोकी की

आपने रक्षा की, संग्राम भूमि में उन दैत्यों का विनाश करके उन्हें स्वर्ग में पहुंचा दिया और वहां हमारा भय भी दुर कर दिया, जो कि हमें उन्मत्त दानव डराया करते थे। हे माता! आपको नमस्कार है। हे देवी! हमारी शूल से रक्षा करें। हे अम्बिके! खड्ग द्वारा हमारी रक्षा करें एवं घण्टा के शब्द तथा धनुष की टंकार से भी हमारी रक्षा कीजिये। हे चण्डिके! पूर्व, पश्चिम, दक्षिण में हमारी रक्षा करें, अपने त्रिशूल को घुमा-घुमाकर उत्तर में भी हमारी रक्षा कीजिए। ऋषि बोले-इस प्रकार देवी जी की देवताओं ने स्तुति की और नन्दन वन में उत्पन्न हुए फूलों तथा गन्ध, चन्दन आदि से जगत् की माता की उपासना की, सभी देवताओं ने भक्तिपूर्वक दिव्य-धूपों द्वारा अर्चना की।

तब देवी प्रसन्न-मुख होकर उन देवताओं से बोलीं-हे सभी देवताओं! अपनी अभिलाषा के अनुसार आप सब हमसे वर मांगों। देवता बोले- हे भगवती! आपने तो हमारी सभी कामनायें पूर्ण कर दीं, कुछ भी बाकी नहीं। हमारे इस महिषासुर शत्रु का आपने वध कर दिया। फिर भी यदि प्रसन्नतापूर्वक हमें वर देना चाहती हो तो हे माता! यह वर दीजिये कि जब-जब भी हम आपका स्मरण करें। हे प्रसन्नवदने! मातेश्वरी! जो भी मनुष्य इन स्तुतियों द्वारा आपकी स्तुति करे, उसे वित्त, ऋद्धि, वैभव दीजिये। हे अम्बिके! हम पर सदा प्रसन्न रहिये। ऋषि बोले-राजन्! जब देवताओं ने अपने तथा जगत् के कल्याण के लिये इस प्रकार वर मांगा तब उन्हें 'तथास्तु' कहकर भद्रकाली अन्तर्ध्यान हो गयीं। हे राजन्! पूर्वकाल में तीनों लोकों का हित चाहने वाली देवी का देवताओं के शरीर से जैसे प्राकट्य हुआ, वह सारी कथा मैने कह सुनाई।

चौथा दिन

4. कूष्माण्डा

सूरासम्पूर्णकलशं रुधिराप्लुतमेव च।
दधाना हस्तपद्माभ्यां कुष्माण्डा शुभदास्तु में॥

मां दुर्गा के चौथे स्वरूप का नाम कूष्माण्डा है। अपनी मन्द, हल्की हंसी द्वारा अण्ड अर्थात् ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करने के कारण इन्हें कूष्माण्डा देवी के नाम से अभिहित किया गया है। नवरात्र पूजन के चौथे दिन कूष्माण्डा देवी के स्वरूप की उपासना की जाती है। इस दिन साधक का मन 'अनाहत' चक्र में अवस्थित होता है। अत: पवित्र मन से पूजा-उपासना के कार्य में लगना चाहिये। मां की उपासना मनुष्य को सहज भव से भवसागर से पार उतारने के लिये सर्वाधिक सुगम और श्रेयस्कर मार्ग है। मां कूष्माण्डा की उपासना मनुष्य को आधियों व्याधियों से सर्वथा विमुक्त करके उसे सुख, समृद्धि और उन्नति की ओर ले जाने वाली है। अत: अपनी लौकिक पारलौकिक उन्नति चाहने वालों को इसकी उपासना में सदैव तत्पर रहना चाहिये।

पाठ प्रारम्भ

पांचवा अध्याय

(देवी की स्तुति-अम्बिका के रूप में प्रशंसा)

ऋषि बोले—प्राचीन समय में शुम्भ-निशुम्भ दोनों असुरों ने बल के मद में आकर इन्द्र का त्रिलोकी राज्य और यज्ञों के भाग छीन लिये। उन्हीं दोनों ने सूर्य, चन्द्रमा, कुबेर और वरुण का अधिकार पा लिया। वायु एवं अग्नि का काम भी वे ही करने लगे। देवताओं को तो अपमानित, पराजित एवं राज्य भ्रष्ट करके स्वर्ग से निकाल दिया। जिनके अधिकार उन दोनों असुरों ने छीन लिये थे, वे सभी पराजित देवता अपराजिता देवी का स्मरण करने लगे कि उस देवी ने तो हमें वर दिया हुआ है कि आपत्तिकाल में मेरा स्मरण करने पर तुम्हारे महान् संकट तत्क्षण में दूर कर दूंगी। यही वरदान विचार कर पर्वतराज हिमालय के पास भी देवता पहुंचे। वहां भगवती की स्तुति करते हुये देवता बोले— देवी एवं महादेवी को नमस्कार, नित्य स्वरूपा गौरी एवं धात्री को नमो नमः। प्रणाम करने वालों को उन्नति करने वाली, सिद्धिस्वरूपा को नमस्कार हो। दैत्यों की लक्ष्मी, राज्य लक्ष्मी, शिवशंकर-पत्नी माता जी को नमो नमः हो। दुर्गा, संकट के

पार कराने वाली दुर्ग पारा, सार-रूप सारा, सर्वकारिणी, ख्याति, कृष्णा, धूम्रादेवी को निरन्तर नमस्कार हो। अत्यन्त सुन्दर एवं अत्यन्त भयंकर रूप उस देवी को बार-बार प्रणाम हो। जगत की प्रतिष्ठा रूपा कृति देवी की नमो नमः हो। जो देवी सभी प्राणियों में चेतना कही जाती है, उसे बार-बार नमस्कार हो। जो देवी सभी प्राणियों में चेतना कही जाती है, उसे बार-बार नमस्कार हो। जो देवी सभी प्राणियों में निद्रा-रूप से कही गई है, उसे नमस्कार, उसे बार-बार नमस्कार हो। जो देवी प्राणियों में क्षमा शक्ति तथा तृष्णा रूप में स्थित है, उसे नमस्कार हो, उसे नमस्कार हो, उसे बार बार नमस्कार हो। जो देवी सभी प्राणियों में कान्ति रूप में स्थित है, उस नमस्कार, उसे नमस्कार, उसे बार-बार नमस्कार हो। जो देवी सभी प्राणियों में भ्रान्ति, कान्ति और जो लक्ष्मी रूप से स्थित है उस नमस्कार, उसे नमस्कार, उसे बार-बार नमस्कार हो। जो देवी समस्त जीवमात्र में वृत्ति-रूप में स्थित है, उसको नमस्कार है, उसको नमस्कार है। उसको बार-बार नमस्कार है। जो देवी समस्त इन्द्रियों तथा सम्पूण जीवमात्र की अधिष्ठात्री है और समस्त जीव मात्र में निरन्तर व्याप्त रहती है, इसको बार-बार नमस्कार है। जो देवी इस सारे जगत में व्याप्त होकर चैतन्य रूप में स्थित है, उसे नमस्कार है, उसे नमस्कार है, उसे बार-बार नमस्कार हो। प्राचीन काल में अपने मनोरथों की सिद्धि के लिये देवताओं ने जिस देवी की स्तुति की, इसी प्रकार, कई दिनों तक सुरपति इन्द्र जिनकी सेवा करता रहा, वह मंगलारूप परमेश्वरी हमारा मंगल एवं कल्याण करे और हमारी आपत्तियां दूर करें। दुष्ट दैत्यों से सन्तापित हम सम्पूर्ण देवता जिस भगवती ईश्वरी को नमस्कार कर रहे हैं और भक्तपूर्वक नम्रता के स्वरूप

मनुष्यों द्वारा स्मरण किये जाने पर उनकी विपत्तियों का नाश कर देती हैं, वह हमारी भी सभी विपत्तियों को दूर करे। ऋषि बोले–हे राजन्! सभी देवता जब इस प्रकार भगवती की स्तुति कर रहे थे, उस समय श्री गंगा जी के जल में स्नान करने के लिए श्री पार्वती जी आयीं। उस समय सुन्दर भौंहों वाली पार्वतीजी ने देवताओं से पूछा कि तुम लोग किसकी स्तुति कर रहे हो। तब उनके शरीर कोश से प्रकट होकर शिवा बोली, ये देवता तो शुम्भ दैत्य से सताए हुये एवं संग्राम में निशुम्भ से पराजित हुये, मिलकर मेरी ही स्तुति कर रहे हैं। श्री पार्वती के शरीरकोश से श्री अम्बिका जी का प्राकट्य हुआ। इसी कारण सारे संसार में कौशिकी के नाम से प्रसिद्ध हैं। इस प्रकार जब कौशिकी प्रकट हुई, श्री पार्वती रूप में काली हो गयीं। अतः हिमालय में रहने वाली कालिका नाम विख्यात हुआ। उसके अनन्तर शुम्भ निशुम्भ के सेवक चण्ड तथा मुण्ड ने वहां आकर उस अम्बिका देवी को देखा जो उस समय परम सुन्दर रूप धारण कर रही थी। उन दोनों ने शुम्भ दैत्य को जाकर कहा कि हिमालय को अपनी कान्ति से प्रकाशित करती हुई परम सुन्दर स्त्री वहां बैठी है। वैसा उत्तम परम सुन्दर रूप किसी ने भी कहीं देखा न होगा। हे असुरराज! वह देवी कौन होगी इस बात का आप ही पता लगाई और उसे ग्रहण कीजिये। वह स्त्री क्या है, रत्न ही है, उसके तो सभी अंग बड़े मनोहर हैं। अपनी दिव्य कान्ति से दिशाओं को प्रकाशित कर रही है। हे दैत्येन्द्र! वह तो बैठी हुई है, आप जाकर उसे देख सकते हैं। हे प्रभो! जैसे भी हो आप उसे ग्रहण कीजिये। ऋषि बोले– तब चण्ड-मुण्ड के वचन सुनकर शुम्भ ने महाअसुर सुग्रीव को दुत बनाकर देवी के पास भेजा और कहा कि तुम

मेरी ओर से उससे इस प्रकार कहना और इस प्रकार उपाय करना जिससे कि वह प्रसन्न होकर अत्यन्त शीघ्र ही यहां आ जायें यह सुनकर वह दैत्य पर्वत के उस प्रदेश पर पहुंचा जो कि अत्यन्त सुन्दर था। वहां पर ही देवी बैठी हुई थी। वहां जाकर उसने देवी से मधुर वाणी द्वारा कोमल वचन कहे। दूत बोला। हे देवी! दैत्यों का स्वामी शुम्भ तीनों लोगों में परमेश्वर है। मैं उसका दूत हूं, मुझे उसने आपके पास भेजा है। मैं वहां जो उसकी आज्ञा न मानता हो उसे परास्त कर देता हूं। उसने सभी देवता परास्त कर दिये हैं। अब आपके लिये जो सन्देश है, वह सुनिये। उसने कहा है–सारी त्रिलोकी मेरी हो चुकी है, सभी देवता मेरे अधीन हैं। सभी यज्ञ भाग पृथक्-पृथक् करके मैं ही पा रहा हूं। त्रिलोकीभर के उत्तम सभी रत्न मेरे अधीन हो चुके हैं। इन्द्र के श्रेष्ठ वाहन ऐरावत हाथी को मैंने छीन लिया है। देवताओं ने क्षीर समुद्र से उत्पन्न उच्चैः श्रवा नामक अश्व-रत्न प्रणाम करके मुझे भेंट कर दिया है तथा और भी जितने देव गन्धर्व एवं नागों के पास रत्नरूप वस्तुयें थीं, वे सबकी सब, हे सुन्दरी! मेरी हो चुकी हैं।

हे देवी! अब हम तुमको स्त्रियों की रत्न मान रहे हैं। इस कारण अब आपको भी हमारे पास आ जाना चाहिये। क्योंकि हम तो रत्नों के भोक्ता हैं। अब तुम्हारी इच्छा है कि मुझे अथवा मेरे पराक्रमी भ्राता निशुम्भ को, इन दोनों में से किसी को, वर लो रत्नरूप हो। मेरे साथ विवाह कर लेने से तुम्हें अतुल ऐश्वर्य प्राप्त हो जायेगा। यह अपनी बुद्धि के द्वारा सोच लो फिर मेरे साथ विवाह कर लो।

ऋषि बोले– जब इस प्रकार दूत ने देवी से कहा तब वह जगत को धारण करने वाली भगती देवी

जी गम्भीर होकर मन्द मुस्कान करके बोलीं–हे दूत! तुमने जो कुछ कहा वह सत्य है, मिथ्या कुछ भी नहीं, इसमें सन्देह नहीं कि शुम्भ त्रिलोकी का स्वामी है और निशुम्भ भी वैसा ही है। किन्तु मैंनें प्रतिज्ञा की हुई है, उसे किस प्रकार से मिथ्या करूं? प्रतिज्ञा इस प्रकार है कि जो मुझे युद्ध में जीत ले एवं मेरा अभिमान तोड़ दे और संसार में मेरे समान बलधारी हो, वह मेरा भर्ता हो सकता है। शुम्भ आये अथवा महाअसुर निशुम्भ आ जाए, मुझे जीतकर मेरा शीघ्रता से पाणिग्रहण करे। दूत बोला– हे देवी! तुम्हें अभिमान है जो इस प्रकार की बातें मेरे सामने कर रही हो। भला कहीं त्रिलोकी में ऐसा कौन सा पुरुष है जो शुम्भ-निशुम्भ का सामना कर सके। सारे देवता तो दूसरे दैत्यों का सामना भी नहीं कर सकते। देवी बोली–हे दूत! इसमें कोई संशय नहीं कि शुम्भ बलवान और निशुम्भ भी पराक्रमी है, पर मैं करूं तो क्या करूं? प्रतिज्ञा करने से पहले यह बात मैंने नहीं सोची थी। अब तुम जाकर असुरराज को मेरी यही बात कह दो, फिर उसे जो उचित दिखाई दे वही करे।

छठवाँ अध्याय

(धूम्रलोचन वध)

ऋषि बोले- देवी जी का इस प्रकार वचन सुनकर दूत क्रोध से लाल होकर लौट आया और फिर दैत्यराज को विस्तार के साथ सभी बातें सुना दीं। दूत के वचन सुनते ही दैत्यराज क्रोध से भर गया, दैत्यों के सेनापति धूम्रलोचन से बोला-हे धूम्रलोचन! तुम देर मत करो, अपनी सेना के साथ वहां जाकर उस दुष्ट को केशों से पकड़ कर, बलपूर्वक घसीटते हुए यहां जल्दी ले आओ; उसकी रक्षार्थ यदि कोई भी वहां दूसरा उपस्थित हो, चाहे वह देवता, यक्ष, गन्धर्व कोई भी हो उसे मार डालो। ऋषि बोले-आज्ञा पाते ही वह धूम्रलोचन दैत्य साठ हजार असुरों की सेना लेकर शीघ्र चल पड़ा। वहां पहुंचकर उस हिमालय पर विराजमान देवी को देखा और ऊंची आवाज में बोला- अरी! तू शुम्भ-निशुम्भ के पास चल। यदि अभी भी प्रसन्नतापूर्वक मेरे स्वामी के पास नहीं चलेगी तो स्मरण रख, तुझे बालों से पकड़कर घसीटते हुये बलपूर्वक मैं ले जाऊंगा। देवी बोली-इसमें संशय नहीं कि तुम्हें दैत्येश्वर ने भेजा है। तुम स्वयं भी बलवान हो, बड़ी भारी सेना भी साथ ले आये हो, इस प्रकार की दशा में मुझे बलपूर्वक ले आओ तो मैं तुम्हारा क्या कर सकती हूँ? ऋषि बोले-जब इस प्रकार का उसे उत्तर मिला तो धूम्रलोचन असुर देवी की ओर

दौड़ा, तब तो देवी अम्बिकाजी ने हुंकार के शब्द से उसे भस्म कर दिया। फिर तो असुरों की क्रोध में आई बड़ी सेना तथा अम्बिका जी ने एक दूसरे की तीक्ष्ण बाण शक्तियां, फरसे आदि बरसाने आरम्भ कर दिये। इधर देवी जी का वाहन सिंह भी कुति होकर भयंकर नाद करता हुआ, अपने बाल झटकारता हुआ, असुरों की सेना पर उछल पड़ा। उस सिंह ने कुछ असुरों को पंजों की मार से एवं कुछ एक को अपने जबड़ों से तथा कई एक महाअसुरों को नीचे पटककर दांतों व दाढ़ों से विदीर्ण करके मार डाला। कितने एक दैत्यों के केसरी ने नाखूनों से पेट फाड़ डाले, कितने एक दैत्यों को तल प्रहार कर उनके सिर धड़ से पृथक कर डाले और अन्यों की भुजायें सिर आदि छिन्न-भिन्न कर दिये। कितनों के पेट फाड़-फाड़ कर, गले के बाल फटकारते हुए, सिंह ने रुधिरपान किया। अत्यन्त कुपित हुये देवी जी के वाहन बलवान सिंह ने क्षणभर में दैत्यों की सेना क्षय कर दी। देवी जी ने उस असुर धूम्रलोचन को मार डाला। देवी जी के वाहन सिंह ने भी सारी सेना का क्षय कर दिया। शुम्भ ने जब यह सुना तो उसके क्रोध का पारा चढ़ गया और उसके होंठ कांपने लगे। झट शुम्भ ने चण्ड तथा मुण्ड दोनों दैत्यों को आज्ञा दी—हे चण्ड तथा मुण्ड! तुम दोनों बड़ी भारी सेना लेकर वहां पहुंचो, उसे जल्दी से यहां लाओ, उसे सेना लेकर खींचकर या बांधकर ले आओ। यदि इस प्रकार लाने में तुम लोगों को संशय हो तो युद्ध करो, सभी प्रकार के अस्त्र-शस्त्र से मारें असुर मिलकर उसे मार डालो। उस दुष्टा के मार जाने एवं सिंह के भी मारे जाने पर, जिस दिशा में भी अम्बिका पड़ी हो उसे बांधकर अपने साथ लेकर शीघ्र जाओ।

पांचवां दिन

५. स्कन्दमाता

सिंहासनगता नित्यं पद्माश्रितकरद्वया।
शुभदास्तु सदा देवी स्कन्दमाता यशस्विनी।।

मां दुर्गा जी के पांचवें स्वरूप को स्कन्दमाता के नाम से जाना जाता है। ये भगवान् स्कन्द 'कुमार कार्तिकेय' नाम से भी जाने जाते हैं। इन्हीं भगवान स्कन्द की माता होने के कारण मां दुर्गा जी के इस पांचवें स्वरूप को स्कन्दमाता के नाम से जाना जाता है। इनकी उपासना नवरात्रि-पूजा के पांचवें दिन की जाती है। इस दिन साधक का मन 'विशुद्ध' चक्र में अवस्थित होता है। इनका वर्ण पूर्णतः शुभ्र है। ये कमल के आसन पर विराजमान रहती हैं। इसी कारण से इन्हें पद्मासना देवी भी कहा जाता है। सिंह भी इनका वाहन है।

नवरात्र-पूजन के पांचवें दिन का शास्त्रों में पुष्कल महत्त्व बताया गया है। इस चक्र में अवस्थित मन वाले साधक की समस्त बाह्य क्रियाओं एवं चित्त वृत्तियों का लोप हो जाता है।

पाठ प्रारम्भ

सातवां अध्याय

(चण्ड और मुण्ड का वध)

ऋषि बोले—तब आज्ञा पाते ही चण्ड-मुण्ड आदि दैत्य, आयुधों से सुसज्जित होकर चतुरंगिणी सेना के साथ चल पड़े। वहां पहुंचकर उन्होंने देखा कि हिमालय की ऊची स्वर्ण की चोटी पर सिंह पर देवी बैठी हैं और मन्द-मन्द हँस रही हैं। इस प्रकार उसे देखकर पकड़ने की चेष्टा करने लगे, किसी ने धनुष चढ़ा लिया, किसी ने तलवार सम्भाल ली एवं कितने ही देवी जी के पास पहुंच गये। तब अम्बिका जी उन शत्रुओं के प्रति क्रोध में आ गई तब तो भयानक मुख वाली काली देवी तलवार तथा पाश लिये प्रकट हो गयीं, उन्होंने अद्भूत सा खट्वांग धारण किया हुआ था, नरमुण्डों की माला शोभित थी, चीते के मर्म की साड़ी पहने हुई थीं, शरीर का मांस सूखा दिखाई देता था, अत्यन्त भयानक रूप था, मुख को खोल रखा था, लपलपाती हुई जिह्वा और भी भयानक थी, धंसी हुई लाल-लाल आंखे थी। गर्जना से सभी दिशाओं

को भर दिया था। तब तो वह बड़े वेग से दैत्य सेना पर टूट पड़ीं, बड़े-बड़े असुरों को मारती हुई उनका भक्षण करने लगी, उन पार्श्वरक्षकों को, अंकुशधारियों को, महावत तथा योद्धाओं को, घण्टों के साथ कितने हाथियों को, एक ही हाथ से पकड़कर मुंह में डालने लगी। वैसे ही घोड़ों के साथ रथों को एवं सारथियों को मुंह में डाल-डाल कर अत्यन्त भयानक रूप से दांतों से उन्हें चबाती जाती थी। किसी के केश पकड़ लेती, तो किसी की गर्दन दबा डालती, किसी को पैरों से दबोच लेती तो किसी को छाती से धकेल कर मार गिराती, असुरों के द्वारा छोड़े हुये अस्त्र-शस्त्रों को मुंह से पकड़ती जाती और दांतों को पीसती जाती। काली जी ने इस प्रकार बलवान दुरात्मा असुरों की वह सेना कुचल डाली, कितने ही असुरों को मार दिया। उस देवी ने कुछ एक तलवार से काट गिराये, कुछ एक खट्वांग से पीट दिये गये और कुछ एक दांतों से कुचल दिये। क्षणभर में राक्षसों की वह सारी सेना मारपीट कर गिरा दी। यह देख चण्ड उस भयानक काली की ओर दौड़ा, इधर महाअसुर मुण्ड ने भी महाभयंकर बाणों की वर्षा से एवं सहस्रों चलाये हुये चक्रों द्वारा, उस भयानक आंखों वाली देवी को ढांप दिया। वे अनेक चक्र देवी के मुख में प्रवेश करते हुये इस प्रकार दिखाई देने लगे जैसे बहुत से सूर्य-बिम्ब बादलों के पेट में समाते जा रहे हों। तब तो जिसके भयानक मुख के भीतर, जिसको देख सकना भी कठिन था, ऐसे दांतों के प्रकाश से दमकती हुई, अत्यन्त क्रोध में आकर भयानक गर्जना करती हुई, वह काली भीषण अट्टहास करने लगी। तब हूँ-हूँ करती हुई, बड़ी तलवार लिए हुए देवी चण्डी पर कूद पड़ी। उसे बालों से पकड़कर उसी तलवार से झट चण्ड का

सिर काट दिया। तब चण्ड को इस प्रकार मारा गया देखकर, मुण्ड देवी की ओर दौड़ा। कुपित काली ने तलवार से मारकर पृथ्वी पर मुण्ड को भी गिरा दिया। महाबली मुण्ड को मरा हुआ देखकर और सेना का नाश देखकर शेष सेना भयभीत होकर इधर-उधर भाग गई। अनन्ता काली जी ने चण्ड तथा मुण्ड के सिर हाथ में ले लिये फिर भयानक अट्टहास करती हुई चण्डिका के पास पहुंचकर बोली- मैंने यह चण्ड और मुण्ड नामी महापशु आपकी भेंट चढ़ा दिये, अब तो शुम्भ-निशुम्भ का आप स्वयं वध करना। ऋषि बोले- अपने सम्मुख लाये गये चण्ड-मुण्ड महाअसुरों को देख कल्याणी चण्डिका काली से ललित वचन बोली- हे देवी कालिके! क्योंकि तुम चण्ड-मुण्ड को लेकर मेरे पास आई हो, इस कारण लोक में चामुण्डा नाम से तुम्हारी ख्याति होगी।

आठवां अध्याय

रक्तबीज वध

ऋषि बोले-चण्ड-मुण्ड दोनों दैत्यों के मारे जाने पर एवं बहुत सी सेना के भी क्षय हो जाने पर, असुर राजा महाप्रतापी शुम्भ के चित्त में भारी क्रोध पैदा हो गया। उसने सभी दैत्यों की सेना का युद्ध के लिये आज्ञा दे दी। उसने कहा- आज छियासी युदायुध के साथ युद्ध के लिये निकलें और मेरी आज्ञा से पचास

करोड़ वीर्यकुल के असुर तथा सौ धौम्रकुल के सेनापति सेनाओं के साथ कूच कर दें और फिर मेरी आज्ञा से कालिक, मौर्य, दौर्हृय, कालिकेय सभी असुर तैयार होकर शीघ्र प्रस्थान करें। भयंकर शासन करने वाले असुरराज शुम्भ ने इस प्रकार आज्ञा देकर स्वयं भी बहुत सी सेनाओं के साथ प्रस्थान कर दिया। जब चण्डिका ने देखा अब इस ओर भयानक सेना लेकर निशुम्भ आ रहा है तब तो उन्होंने अपने धनुष की टंकार करके पृथ्वी आकाश के मध्य-भाग को गुंजा दिया।

हे राजन्! उस समय सिंह ने भी बड़ी भारी गर्जना की। फिर अम्बिका जी ने घण्टा बजाकर उस गर्जना को और भी बढ़ा दिया। उस शब्द को सुनकर दैत्य सेनाओं ने आकर चारो ओर से देवी, सिंह और काली को क्रोध के साथ घेर लिया। इसी अवसर के मध्य में, हे राजन्! दैत्यों के नाश के लिये तथा देवताओं की वृद्धि के लिये अत्यन्त बल एवं पराक्रम से सम्पन्न होकर ब्रह्मा, विष्णु, शिव, कार्तिक स्वामी, इन्द्र आदि देवों की शक्तियां उन्हीं के शरीरों से निकलकर उन्हीं-उन्हीं वस्तुओं से सम्पन्न होकर, वह देवता शक्ति वही रूप धारण कर दैत्यों के साथ युद्ध करने आ गई। ब्रह्माजी की शक्ति जिसे ब्रह्माणी कहा जाता है, जो हंसों से जुते हुये विमान पर आरूढ़ थी, अक्षयसूत्र कमण्डल से शोभित थी, सबसे प्रथम उपस्थित हुई। महेश्वर की शक्ति वृषभ पर विराजमान सुन्दर त्रिशूल धारण किये, महासर्पों के कंकण धारण किये, मस्तक पर चन्द्ररेखा सुशोभित थी वह मांतेश्वरी शक्ति आई। कार्तिक स्वामी की शक्ति, हाथ में शक्ति

लिये, मोर पर आरूढ़ गृह्यरूपिणी कौमारी अम्बिका शक्ति दैत्यों से युद्ध करने आई। वैसे ही विष्णु की शक्ति गरुड़ पर सवार होकर शंख, चक्र, गदा, शार्ंग एवं खंग हाथ में लिये वहां वैष्णवी शक्ति आ गई। यज्ञ वाराह का विचित्र रूप धारण करने वाले विष्णु की वाराह शक्ति वैसा ही शरीर धारण करके वहां आई। नृसिंह जी के समान शरीर को धारण किये गर्दन के बालों के फटकारने से आकाश के तारों को बिखेरती हुई नारसिंही शक्ति वहां पर पहुंची। इन्द्र की शक्ति इन्द्र के समान रूप वाली हजार नेत्र धारण किये वज्र हाथ में लेकर ऐरावत गजराज पर आरूढ़ होकर वहां आ गई।

तब उन शक्तियों से घिरे हुए शंकर जी ने चण्डिका से कहा—मेरी प्रसन्नता के लिये शीघ्र से शीघ्र इन असुरों का संहार करो। तब देवी के शरीर से अत्यन्त भयानक सैकड़ों गीदड़ियों की भांति हुं-हुं करती हुई बड़ी चण्डिका शक्ति प्रकट हो गई। तब उस अपराजिता देवी ने धुएं जैसे जटा वाले शिव से कहा—भगवन्! आप दूत बनकर शुम्भ-निशुम्भ के पास जायें वहां जाकर उन महाअभिमानी शुम्भ-निशुम्भ दानवों को तथा युद्ध में आये हुए दूसरे दानवों को भी कहें कि हे दानवों। यदि तुम लोग जीना चाहते हो तो त्रिलोकी का राज्य इन्द्र प्राप्त करे, सभी देवता यज्ञ-भाग पायें और तुम लोग पाताल में चले जाओ, यदि तुम्हें कुछ बल का अभिमान हो और युद्ध की अभिलाषा हो तो आ जाओ ताकि तुम्हारे मांस से गिदड़ियां तृप्त हो जायें।

इस दूत रूप में स्वयं शिव को ही देवी जी ने नियुक्त किया, वह शिव-शक्ति संसार में शिवदूती इस नाम

से विख्यात हुई जब शिव द्वारा कथित देवी जी के वचन उन महाअसुरों ने सुने तो बड़े क्रोध में आ गये और जहां कात्यायनी देवी स्थित थी उस ओर बढ़ने लगे। वहां कुपित होकर उन देवशत्रुओं ने बाण, शक्ति, ऋष्टि आदि आयुधों से देवी जी पर पहले वर्षा करना आरम्भ कर दिया। तब टंकार करके धनुष द्वारा पैने-पैने बाण छोड़कर देवी जी ने खेल ही खेल में उनके फेंके हुये बाण, शूल, शक्ति, परशू आदि शस्त्रों को काट डाला। फिर काली भी उनके सामने होकर शत्रूओं को शूल के प्रहारों से चीरती-फाड़ती खट्वांग से कुचलती मारती विचरण करने लगी।

इधर ब्रह्माणी शक्ति भी जिस ओर दौड़ती उसी ओर अपने कमण्डल का जल छिड़क देती जिससे शत्रुओं का पराक्रम एवं तेज नष्ट होता जा रहा था, माहेश्वरी शक्ति ने त्रिशूल द्वारा, वैष्णावी शक्ति ने चक्र द्वारा और कौमारी शक्ति ने शक्ति द्वारा, उन दैत्यों का क्षय करना आरम्भ कर दिया। ऐन्द्री शक्ति के वज्र गिराने से सैकड़ों दैत्य दानव विदीर्ण होकर रुधिर के पतनाले बहाते हुये पृथ्वी पर गिरने लगे। वाराही शक्ति ने तो कुछ एक को तुण्ड प्रहार से मार गिराया, कितने दैत्यों की छातियां अपने दाढ़ों के अग्रभाग से चीर डालीं, वाराह मूर्ति ने चक्र द्वारा बहुत से दैत्य चीर-फाड़ डाले। कितने दैत्य शिवदूती के कठोर अट्टहास से भयभीत होकर पृथ्वी पर गिरते गये फिर उन्हें वह खाती गई। इस प्रकार अत्यन्त कुपित होकर, अनेक उपायों द्वारा बड़े-बड़े दैत्यों को मारते हुये मातृगण को देखकर, देवशत्रुओं के सैनिक भागने लगे।

उन दैत्यों को मातृगण से पीड़ित होकर भागते हुये देखकर, क्रुद्ध महाअसुर रक्तबीज युद्ध करने के लिए आ गया। रक्तबीज के वज्रमय शरीर से एक भी रुधिर बिन्दु जब पृथ्वी पर गिरती तब उसके समान बलवान दूसरा असुर पैदा हो जाता। उस महाअसुर ने आकर इन्द्र शक्ति के साथ युद्ध किया, तब ऐन्द्री शक्ति ने अपने वज्र के द्वारा रक्तबीज की ताड़ना की, वज्र के लगते ही उसके शरीर से बहुत से योद्धा पैदा हो गये, जिनका रूप पराक्रम रक्तबीज के समान था। जितनी भी रक्त की बूंदें शरीर से गिरती थी उनके उतने ही उसके सदृश बलवीर्य पराक्रमी पुरुष उत्पन्न हो गये। वे रक्त से उत्पन्न हुये पुरुष भी अत्यन्त भयानक अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित होकर मातृगणों के साथ लड़ने लगे। फिर ऐन्द्री ने वज्र से उसका सिर क्षत-विक्षत कर दिया, उससे रुधिर बह उठा, तब हजारों पुरुष उस रुधिर से पैदा हो गये। वैष्णवी के चक्र से क्षत होने पर उसके शरीर से ज्योंही रुधिर-स्राव हुआ, उससे हजारों उसी के समान महाअसुर पैदा हो गये जिनसे सम्पूर्ण जगत भर गया।

कौमारी ने शक्ति से उसे मारा, वाराही ने तलवार से, माहेश्वरी ने महाअसुर रक्तबीज का त्रिशूल से हनन किया। उस दैत्य ने भी गदा द्वारा सभी मातृगणों को पृथक-पृथक मारा, उस समय रक्तबीज बड़े क्रोध में समाविष्ट था। शक्ति-शूल आदि आयुधों से कई बार विक्षत होने पर उसक शरीर से रक्त प्रवाह के पृथ्वी पर गिरते ही सैकड़ों असुर उत्पन्न हो चुके थे। दैत्य के रुधिर से उत्पन्न उन असुरों से सारा जगत्

वयाप्त हो गया। देवताओं को डरा एवं उदास देखकर तब शीघ्र ही चण्डिका ने काली से कहा—चामुण्डे! अपना मुख तुम अधिक विस्तार से फैला लो। मेरे शस्त्र के प्रहार से गिरते हुये रुधिर बिन्दु और बिन्दुओं से उत्पन्न महादैत्यों को अपने वेगवान मुख द्वारा खाती जाओ और युद्धभूमि में रूधिरोत्पन्न इन महादैत्यों का भक्षण करती घूमती रहो।

इस प्रकार कहकर चण्ड़िका ने रक्तबीज पर त्रिशूल से प्रहार किया। फिर काली ने रक्तबीज का रुधिर मुख से ग्रहण कर लिया। उस दैत्य ने भी चण्डिका पर गदा चलाई किन्तु उस गदापात द्वारा चण्डिका को कुछ भी वेदना न हुई। रक्तबीज के क्षत-विक्षत शरीर से, जो बहुत से रुधिर गिरने लगा उसे चामुण्डा मुख द्वारा पीती गई और जो रक्तपात से दैत्य खा डाले और रक्तबीज का रुधिर भी पी डाला। तब देवी ने शूल, वज्र तलवार, ऋष्टि आदि आयुधों से हीन उस महाअसुर रक्तबीज को मार दिया। शस्त्र समूहों से आहत होकर वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। हे राजन्! रुधिर तो उसका चामुण्डा ने पी ही लिया था। उसकी मृत्यु होने पर देवता परम प्रसन्न हुये, मातृगण उसके रुधिरपान के मद से उन्मत्त हो कर नृत्य करने लगी।

छठा दिन

6. कात्यायनी

चन्द्रहासोज्ज्वलक शार्दूलवरवाहना।
कात्यायनी शुभं दद्यादेव दानवघातिनि।।

मां दुर्गा के छठवें स्वरूप का नाम कात्यायनी है। ये महर्षि कात्यायन की कठिन तपस्या से प्रसन्न होकर इनकी इच्छानुसार उनके यहां पुत्री रूप में उत्पन्न हुई थीं। महर्षि कात्यायन ने सर्वप्रथम इनकी पूजा की इसी कारण से ये कात्यायनी कहलाईं। मां कात्यायनी अमोघ फलदायिनी हैं। दुर्गा पूजा के छठवें दिन इनके स्वरूप की उपासना की जाती है। इस दिन साधक का मन 'आज्ञा' चक्र में स्थित होता है। योगसाधना में इस आज्ञा चक्र का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस चक्र में स्थित मन वाला साधक मां कात्यायनी के चरणों में अपना सर्वस्व निवेदित कर देता है। परिपूर्ण आत्मदान करने वाले ऐसे भक्त को सहज भाव से मां कात्यायनी के दर्शन प्राप्त हो जाते हैं। इनका साधक इस लोक में रहता हुआ भी अलौकिक तेज से युक्त हो जाता है।

पाठ प्रारम्भ

नौवां अध्याय

(निशुम्भ वध)

ऋषि बोले–हे राजन्! रक्तबीज के मर जाने पर एवं युद्ध में अन्य असुरों के भी मारे जाने पर शुम्भ-निशुम्भ दैत्यों का क्रोध बढ़ गया। फिर दैत्यों की प्रधान सेना का साथ लेकर निशुम्भ युद्ध में दौड़ा चला आया, उसके आगे-पीछे, दायें-बायें, बड़े-बड़े दैत्य थे। वे क्रोध के मारे होंठ काट रहे थे। शुम्भ भी अपनी सेना के साथ मातृगणों से लड़कर चण्डिका को मार डालने की इच्छा से आ गया। दोनों दैत्य बादलों की तरह बाणों की वर्षा करने लगे। अपने बाणों के समूहों से चण्डिका ने उनके बाण काट दिये। फिर शस्त्र-समूह से उन दैत्यों के अंगों पर प्रहार किया। निशुम्भ ने तीखी तलवार तथा चमचमाती ढाल उठा ली, देवी के पराक्रमी वाहन सिंह के सिर पर प्रहार किया। अपने वाहन पर इस प्रकार प्रहार होते देख, देवी ने क्षुरप्र नामक बाण द्वारा निशुम्भ की अच्छी तलवार तथा आठ चन्द्रों वाली ढाल भी काट दी। तलवार और

ढाल के कट जाने पर उस दैत्य ने शक्ति चलाई। उसे आते देख देवी ने चक्र द्वारा उसके दो टुकड़े कर डाले। तब तो अत्यन्त कुपित होकर निशुम्भ दानव ने शूल उठा लिया और उसे फेंक दिया, देवी जी ने मक्के के प्रहार से उसे चूर-चूर कर दिया। दैत्य ने गदा उठाकर फ़िर चण्डिका की ओर फेंकी। देवी ने उसे भी त्रिशूल द्वारा काट दिया और वह भस्म हो गई। फिर अन्त में दैत्यराज को फरसा उठाये आता देखकर देवी ने बाण-समूहों से प्रहार कर उसे पृथ्वी पर गिरा दिया। उस भयानक पराक्रमी भाई निशुम्भ के इस प्रकार धराशायी होने पर शुम्भ क्रोध में भर गया और अम्बिका को मारने के लिए सामने आया, वह रथ पर बैठा हुआ था। उसकी बड़ी-बड़ी अनुपम आठ भुजायें थीं, उनमें आठ भयंकर शस्त्र शोभायमान थे। उन भुजाओं से सारे आकाश को ढांपकर वह शोभित हो रहा था। उसे इस प्रकार आता देखकर देवी ने शंख बजाया और धनुष की अत्यन्त दु:सह टंकार की। समस्त दैत्यों के तेज नष्ट करने वाले घण्टे का शब्द करके, उससे दिशाओं को भर दिया। तब सिंह ने भी बड़े हाथियों के महामद को दूर करने वाली बड़ी भारी गर्जना लगाई, उसके द्वारा आकाश पृथ्वी एवं दसों दिशायें गूंज उठीं। तब काली ने आकाश में उड़कर पृथ्वी पर दोनों हाथों से ऐसी ताड़ना की कि उस शब्द से पहले के सभी शब्द मन्द पड़ गये। तब शिवदूती ने अमंगल रूप अत्यन्त अट्टहास किया। उस ध्वनि से दैत्य डर गये। शुम्भ के क्रोध का पारा चढ़ गया। फिर जबकि अम्बिका ने कहा कि हे दुरात्मन! ठहर-ठहर!! तब आकाश में स्थित देवता

जय-जयकार करने लगे। शुम्भ ने पहुंचकर, आग बरसाती हुई भयानक शक्ति चलाई, अग्नि को पहाड़ की तरह आती हुई देवी ने भारी उल्का से उसे दूर हटा दिया। शुम्भ ने फिर सिंहनाद किया उससे त्रिलोकी गूंज उठी–हे राजन्! उस सिंहनाद का इतना घोर शब्द था, जैसे कि वज्रपात हो, उसने बाकी शब्दों को परास्त कर दिया। तब शुम्भ द्वारा छोड़े हुये बाणों को देवी ने तथा देवी द्वारा चलाये गये बाणों को शुम्भ ने, अपने-अपने उग्रबाणों द्वारा सैकड़ों हजारों टुकड़े कर दिये। तब चण्डिका ने कुपित होकर शुम्भ को शूल से मारा, उसके लगते ही वह मूच्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। इतने में निशुम्भ चैतन्य होकर वहां पहुंच गया। हाथ में धनुष लेकर बाणों से काली तथा सिंह पर प्रहार कर दिया। उस दानवराज ने अपनी दस हजार भुजायें बना लीं, फिर चक्रों का प्रहार करने लगा। तब घोर संकटों का नाश करने वाली भगवती दुर्गा ने अपने बाणों से चक्र तथा सभी बाणों को काट गिराया। तब निशुम्भ-दैत्य सेना से आवृत्त होकर चण्डिका के वध के लिये हाथ में गदा को लेकर बड़े वेग से भागा। वेग से आते हुये उसकी गदा को तीखी तलवार के द्वारा चण्डिका ने काट दिया। फिर दैत्य ने शूल उठा लिया। शूल हाथ में लिये उस देतपीड़क निशुम्भ को आता देखकर चण्डिका ने अपना शूल वेग से चलाकर उसकी छाती बींध दी। उसकी छाती फटते ही उसकी छाती से एक और महाबली पुरुष की यह बात सुनते ही देवी आवाज करके हंसी और तलवार से उसका सिर काट दिया। वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। तब भयानक दाढ़ों वाला सिंह, दाढ़ों से असुरों को सिर

खुरच-खुरच कर खाने लगा। वैसे ही काल ने तथा शिवदूती ने बहुत से दैत्यों का भक्षण कर डाला। कुछ एक घोर संग्राम से भाग गये एवं कितने दैत्यों को काली तथा शिवदूती ने खा डाला और कई सिंह के ग्राम बन गये।

दसवां अध्याय

(शुम्भ वध)

ऋषि बोले– अपने प्राण-प्रिय भाई निशुम्भ की मृत्यु को देखकर इस प्रकार सेना को भी मरता देखकर कुपित होकर शुम्भ कहने लगा–अरी दुष्ट दुर्गे! तू बल के घमण्ड से गर्व मत कर, अरी अहंकारिणी! तू तो अन्य स्त्रियों के बल के सहारे लड़ रही है। देवी बोली–अरे दुष्ट! मैं अकेली हू, संसार भर में मेरे समान दूसरी है कौन? ये तो मेरी विभूतियां है, मुझमें ही प्रवेश कर रही हैं। इतना कहते ही ब्रह्माणी आदि सभी शक्तियां उस देवी के शरीर में समा गईं। अकेली अम्बिका देवी रह गई। देवी बोली– मैं अपनी ऐश्वर्यशक्ति सम्पन्न अनेक विभूतियों के रूपों में यहां पहले विद्यमान थी, अब मैंने सभी रूप समेट लिये

अब तो अकेली युद्ध में खड़ी हू, तू भी स्थिर हो जा।

ऋषि बोले– तब सभी देवता तथा दैत्यों के देखते-देखते देवी और शुम्भ इन दोनों में युद्ध सभी लोकों के लिये भयंकर प्रतीत होने लगा। जितने भी दिव्य से दिव्य अस्त्र अम्बिका छोड़ती जाती, दैत्येन्द्र उन्हें निवारक-अस्त्रों द्वारा तोड़ता जाता। इसी प्रकार परमेश्वरी अम्बिका भी खेल-खेल में हुंकारादि शब्दों द्वारा दैत्य से छोड़ दिव्य शास्त्रां को तोड़ती गई। तदनन्तर असुर ने सैकड़ों बाणों से देवी को आच्छादित कर दिया। तब देवी ने भी कुपित होकर बाणों द्वारा उसका धनुष काट डाला। धनुष के टूट जाने पर दैत्येन्द्र ने हाथ में शक्ति उठा ली। अभी शक्ति उसके हाथ में ही थी कि देवी ने चक्र द्वारा वह शक्ति काट डाली। तब दैत्यराज तलवार तथा सौ चन्द्रमा वाली चमचमाती ढाल लेकर देवी पर झपटा। उसकी तलवार तथा सूर्य जैसी चमकती ढाल को देवी ने अपने धनुष से छोड़े हुये तीखे बाणों से तुरन्त काट दिया। रथ के घोड़े तथा सारथी को भी मार दिया। धनुष तो पहले ही कट चुका था, तब तो भयानक मुद्गर को भी तीखे तीरों से काट दिया। फिर भी वह दैत्य मुक्का तानकर बड़े वेग से दौड़ा, जाते ही उस दैत्येश्वर ने देवी के हृदय में मुक्का मार दिया। देवी ने भी उसकी छाती पर एक चपेट जमा दी, देवी की उस चपेट के लगते ही वह दैत्याराज पृथ्वी पर गिर पड़ा। गिरकर भी सहसा उसी प्रकार उठ खड़ा हुआ। तब उछलकर देवी को उठाकर आकाश में स्थित हो गया। वहां भी निराधार होकर वह चण्डिका देवी के साथ युद्ध करने लगा। आकाश में उस समय दैत्य तथा चण्डिका का आपस में घोर युद्ध हो रहा था। वह युद्धमुनियों के लिये विस्मयकारक था। अब अम्बिका ने उसके साथ देर तक युद्ध करते करते दैत्य को उठा लिया और उसे पृथ्वी पर पटक

दिया। देवी द्वारा पटका द्वारा वह पृथ्वी पर आकर खड़ा हो गया। मुक्का तान वह दुष्ट, देवी को मारने की इच्छा से बड़े वेग से दौड़ा। तब उस दैत्य को आता हुआ देखकर देवी ने उसकी छाती में त्रिशूल भोंक दिया और पृथ्वी पर गिरा दिया। देवी के शूल से क्षत-विक्षत होकर पृथ्वी पर पड़ते ही उसके प्राण निकल गये। उसका गिरना भी समुद्र, द्वीप एवं पर्वतों के साथ सारी पृथ्वी को हिला देने वाला था। उस दुरात्मा के मरते ही सारा जगत स्वस्थ एवं प्रसन्न हो गया, आकाश भी बहुत ही साफ दिखाई देने लगा, पहले जो उपद्रवी मेघ उठ रहे थे तथा उल्कापात हो रहे थे, वे सभी शान्त हो गये। दैत्यों के मारे जाने पर नदियां भी अपने-अपने मार्ग पर चलने लगीं। उसकी मृत्यु होते ही सभी देवताओं के मन प्रसन्न हो गये। गन्धर्व मनोहर गायन करने लगे। अप्सरा-गण नाचने लगीं। दूसरे बाजे बजाने लगे। वायु पवित्र होकर चलने लगीं। दिशाओं की भयंकर आवाजें शान्त हो गयीं। प्रजा सुखी हुई और सर्वत्र शान्ति का साम्राज्य हो गया।

सातवाँ दिन

7. कालरात्रि

एकवेणी जपाकर्णपूरा नग्ना खरास्थिता।
लम्बोष्ठी कर्णिकाकर्णी तैलाभ्यक्तशरीरिणी।।
वामपादोल्लसल्लोहलताकण्टकभूषणा।
वर्धनमूर्धध्वजा कृष्णा कालरात्रिर्भयंकरी।।

मां दुर्गाजी की सातवीं शक्ति कालरात्रि के नाम से जानी जाती हैं। मां कालरात्रि का स्वरूप देखने में अत्यन्त भयानक है, लेकिन ये सदैव शुभ फल ही देने वाली हैं। इसी कारण इनका एक नाम 'शुभंकरी' भी है। दुर्गा पूजा के सातवें दिन मां कालरात्रि की उपासना का विधान है। इस दिन साधक का मन 'सहस्रार' चक्र में स्थित रहता है। उसके लिए ब्रह्माण्ड की समस्त सिद्धियों का द्वार खुलने लगता है। इस चक्र में स्थित साधक का मन पूर्णतः मां कालरात्रि के स्वरूप में अवस्थित रहता है। मां कालरात्रि दुष्टों का विनाश और ग्रह बाधाओं को दूर करने वाली हैं जिससे साधक भयमुक्त हो जाता है।

पाठ प्रारम्भ

ग्यारहवां अध्याय

(देवताओं द्वारा देवी की स्तुति एवं देवी द्वारा देवताओं को वरदान)

ऋषि बोले–देवी ने जब दैत्यराज महाअसुर शुम्भ का वध कर दिया तब इन्द्रादिक सभी देवता अग्नि को मुख्य करके, अपने मनोरथ सिद्धि के लाभ से, सभी दिशाओं को दमकते हुये मुखकमलों से प्रकाशित करते हुये, उस कात्यायनी देवी की स्तुति करने लगे। देवता बोले– हे शरणागतों के संकट निवारिणी देवी! हम पर प्रसन्न होइए। हे सारे जगत् की माता! हे विश्वेश्वरि! विश्व आप हो। हे देवी! आपने इस सारे जगत को मोहित कर रखा है। पृथ्वी पर आपकी प्रसन्नता से ही मुक्ति का लाभ होता है। हे देवी जी! सभी विद्यायें आपका भेद हैं। जगत्‌भर की सब स्त्रियां आपकी ही मूर्तियां हैं। हे जगदम्बे! आप अकेली नें ही सारे जगत् को व्याप्त किया हुआ है। आपकी स्तुति क्या हो सकती है? आप तो स्तुति से परे हो एवं परावाणी हो। जबकि आप सबकी आधार, स्वर्ग एवं मुक्ति देने वाली हो, इसी से आपकी स्तुति होगी। आपकी स्तुति के लिये अन्य कौन-सी उत्तम उक्तियां हो सकती हैं। सारे जनों के हृदय में बुद्धि रूप होकर आप ही स्थित हो। हे देवी! स्वर्ग एवं मोक्ष देने वाली नारायणी! आपको नमस्कार हो। काष्ठादिक रूप से सबकी रक्षा कीजिये।

हे देवी! आप चर-अचर की स्वामिनी हो। आप ही एकमात्र जगत् का आधार हो, पृथ्वी स्वरूप में विराज रही हो। देवी जी, आपका पराक्रम उलंघनीय है। आप ही जल-स्वरूप में स्थित होकर, इस सारे विश्व को तृप्त कर रही हो। अनन्त पराक्रम वाली आप ही वैष्णवी शक्ति हो। विश्वभर की परमबीज माया, विश्व का उपसंहार करने में समर्थ, हे नारायणी देवी! आपको नमस्कार हो। हे देवी! आप सभी मंगलों को देने वाली हो, हे नारायणी! आपको नमस्कार हो। आप ही सृष्टि, स्थिति एवं संहार करने में सनातनी शक्ति स्वरूप हो। आप गुणमयी एवं गुणों का आधार हो, हे नारायणी देवी! आपको नमस्कार हो। शरण में आये हुये दीन-दुःखियों की रक्षा करने में संलग्न, सबके संकट निवारण करने वाली, आपको नमस्कार हो। हंसों से जुते हुये विमान पर विराजमान, ब्रह्माणी के रूप को धारण करने वाली, कुशमिश्रित जल छिड़कने वाली, नारायणी देवी आपको नमस्कार हो। मोर तथा मुर्गों से आवृत्त, महाशक्ति कर में धारण करनेवाली, महापाप रहित कौमारी रूप में स्थित, हे नारायणी! आपको नमस्कार हो। शंख, चक्र गदा, शांग इन उत्तम अस्त्रों को धारण करने वाली वैष्णवी शक्तिरूप प्रसन्न होओ। हे नारायणी! आपको नमस्कार हो। हाथ में भयंकर चक्र धारण किये, दाढ़ों पर पृथ्वी को उएठाए हुये, वाराहरूप धारिणी शिवे नारायणी! आपको नमस्कार हो। भयानक नृसिंह का रूप धारण करके दैत्यों का वध करने के लिये उद्यमशील, त्रिलोकी की रक्षा करने में परायण नारायणी! आपको नमस्कार हो। हजारों उज्जवल नेत्र धारण करने वाली, किरीटधरिणी, महावज्रधारिणी, वृत्तासुर के प्राण हरने वाली इन्द्रशक्तिरूपा नारायणी! आपको नमस्कार हो।

शिवदूती के स्वरूप से दैत्यों की बड़ी सेना का नाश करने वाली, महानाद करने वाली, भयंकर रूप वाली नारायणी! आपको नमस्कार हो। भयानक दाढ़ों से भयानक मुख वाली, मुण्ड मालाओं से शोभायमान, मुण्डों का मंथन करने वाली चामुण्डा नारायणी! आपको नमस्कार हों। लक्ष्मी, लजा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, ध्रुवा, महारात्र, महाअविद्यारूपा हे नारायणी! आपको नमस्कार हो। मेधा, सरस्वती, वरा, ऐश्वर्यरूपा, पार्वती, महाकाली, संयमशीला, सर्वस्वामिनी हे नारायणी! आपको नमस्कार हो। सर्वईश्वरी, सभी शक्तियों से सम्पन्न, हे दुर्गा देवी! हमारी भयों से रक्षा करो, हे देवी आपको नमस्कार हो। यह आपका मुख तीन नेत्रों से भूषित और सुन्दर है, हमारी सभी भयों से रक्षा करो, हे कात्यायनी आपको नमस्कार हो। हे भद्रकाली! सभी दैत्यों का नाश करने वाली, भड़कती हुई अग्नि की ज्वालाओं से महाभयानक आपका त्रिशूल हमारी भया से रक्षा करे, आपको नमस्कार हो। हे देवी! शब्द द्वारा सारे जगत् को व्याप्त करके जो दैत्यों का तेज हनन कर देता है, वह आपका घण्टा, जैसे माता अपने पुत्रों को पापों से बचाती है, वैसे ही हमारी रक्षा करे। हे चण्डिके! आपके सुन्दर हाथों की तलवार, जो असूरों के खून और चर्बी से लथपथ हो रही है, वह हमारा मंगल करे, हम आपको प्रणाम करते है। हे देवी! जब आप प्रसन्न होती हो तो सभी रोगों को नष्ट कर देती हो, क्रोध करने पर सभी मनोरथ एवं कामनायें नाश करती हो। आपके आश्रित पुरुषों पर कोई संकट नहीं आता, अपितु आपके आश्रित पुरुष दूसरों को भी आश्रय देते हैं। हे देवी! आपने

जो आज इन धर्म-द्वेषी महादैत्यों का क्षया किया है, वह अपने स्वरूपों को अनेक शक्तिरूपों में विभक्त करके किया है। हे अम्बिके! आपके सिवाय और कौन दूसरा ऐसा कर सकता है? विद्याओं में, विचारों के दीपक रूप शास्त्रों में, वेद-वाक्यों में, आपके सिवा और किसका वर्णन आता है; और न आपके सिवा कोई दूसरी शक्ति हैं जो इस विश्व को अज्ञान रूपी भयानक अन्धकार से पूर्ण ममतारूपी गड्ढे में खूब भटका रही है। जहां राक्षस हों, विष वाले सर्प हों, जहां शत्रु हों, जहां पर डाकुओं का दल आ जाए, वन में आग लग रही हो एवं समुद्र के मध्य में जहां कहीं उपस्थित होकर आप विश्व की रक्षा कर लेती हो। हे विश्वेश्वरि! आप विश्व की रक्षा करती हो, विश्वरूप होकर विश्व को धारण करती हो, आप विश्वेश्वर से वन्दनीय हो। जो पुरुष आपको प्रणाम करते हैं वे विश्व के आश्रय हो जाते हैं। हे देवी! जिस प्रकार इस दैत्यों के वध से तुरन्त हमारी रक्षा कर ली, इसी प्रकार नित्य ही हमें शत्रुओं के भय से बचाइये, प्रसन्न होइये और जल्दी से सारे जगत् के पाप नष्ट करिए। पापों से उत्पन्न महामारी आदि उपद्रव भी दूर हों। हे देवी! विश्वभर में दुःख दूर करने वाली! प्रणाम करने वाले हम पर प्रसन्न होइये। तीनों लोकों के निवासियों से स्तुति की गई मातेश्वरी! सब लोकों के निवासियों से स्तुति की गई मातेश्वरी! सब लोकों को वरदान दीजिए। देवी बोली—हे देवगण! मैं वर देने को तैयार हूं, मनचाहा वर मांग लो, संसार का उपकारक वर मैं अवश्य देती हूं। देवता बोले—हे सर्वेश्वरी! आप त्रिलोकी की समस्त बाधायें शान्त करें और इसी

प्रकार हमारे शत्रुओं का भी नाश करती रहें। देवी बोली—हे देवगण! वैवस्वत मन्वन्तर के अट्ठाइसवें युग के आने पर शुम्भ-निशुम्भ नामी दो और महादैत्य पैदा हो जायेंगे। तब मैं ननदगोप की गृहिणी यशोदा के गर्भ से अवतार लूंगी और विन्ध्याचल में जाकर निवास करूंगी। फिर पृथ्वी पर महाभयंकर रूप से अवतार लेकर वैप्रचित्ती नामक घोर दैत्यों का भक्षण करते समय, मेरे दांत भी अनार के फूलों की तरह लाल हो जायेंगे। तब स्वर्ग से देवता और पृथ्वी पर मनुष्य मेरी स्तुति करते समय, मुझे 'रक्तदंतिका' कहेंगे। उसके अनन्तर जब पृथ्वी पर सौ वर्षों तक वर्षा नहीं होगी, पानी मिलेगा ही नहीं, तब मुनिजन मेरी स्तुति करेंगे, उस समय मैं अयोनिजा प्रकट होऊंगी, मैं सौ नेत्रों द्वारा उन मुनियों को देखूंगी, तब मनुष्य मेरा शताक्षी नाम से कीर्तन करेंगे। हे देवतागण! उस समय सारे संसार को जब तक वर्षा नहीं होती, तब तक अपने शरीर से उत्पन्न शाकों द्वारा पालूंगी। पृथ्वी पर 'शाकम्भरी' इस नाम से मैं विख्यात हो जाऊंगी, वहां पर मैं एक दुर्गम नाम के दैत्य का वध करूंगी। फिर मेरा नाम दुर्गा देवी विख्यात होगा। फिर जब मैं भयानक रूप धारण करके हिमालय पर रहने वाले राक्षसों का मुनियों की रक्षा के लिये, भक्षण करूंगी, उसी समय सभी मुनि भक्ति भाव से नम्र होकर मेरी स्तुति करेंगे। तब मेरा नाम भीमा-देवी विख्यात होगा। फिर अब अरुण नामक दैत्य तीनों-लोकों में भारी उपद्रव मचाएगा, तब त्रिलोक की रक्षा के लिए छः पंजों वाले असंख्य

भ्रमरों का रूप धारण करके उस महाअसुर का वध करूंगी। उस समय मुझे भ्रामरी कहकर लोग सर्वत्र मेरी

स्तुति करेंगे। इसी प्रकार जब-जब भी लोकों में दैत्यों द्वारा बाधायें उपस्थित होंगी तब तब मैं अवतार लेकर शत्रुओं का नाश करूंगी।

बारहवां अध्याय

(देवी चरित्रों के पाठ का महात्म्य)

देवी बोलीं—जो पुरुष एकाग्र होकर इन स्तोत्रों से नित्य मेरी स्तुति करेगा उसकी सभी बाधायें मैं निःसंशय नाश कर दूंगी, लुटेरे तथा राजा से भी कोई भय नहीं आयेगा और न शस्त्रों से, न अग्नि से, भय कभी भी न होगा। इसलिये मेरा महात्म्य एकाग्रचित होकर पढ़ना चाहिये एवं भक्ति से सदा सुनना चाहिये। मेरा चरित्र परम मंगलदायक है। महामारी से उत्पन्न सभी उपद्रवों को तथा तीनों पापों को मेरा महात्म्य शान्त कर देता है। मेरे जिस मंदिर में मेरा यह महात्म्य पढ़ा जा रहा हो उस स्थान का मैं कभी त्याग नहीं करती, वहां मेरा सदा सन्निधान रहता है। बलिदान, पूजा, अग्निहोत्र एवं महोत्सव में, इस मेरे सारे चरित्र का पाठ करें और श्रवण करें। इस प्रकार विधि जानकर अथवा बिना जाने बलि, पूजा, हवन आदि जो कुछ भी करेगा उसे मैं प्रीतिपूर्वक ग्रहण कर लेती हूं। शरदकाल में मेरी वार्षिक महापूजा की जाती है। उस अवसर पर जो मेरे इस महात्म्य को भक्ति के साथ सुनेगा, उसकी सभी बाधायें निवृत्त हो जायेंगी और वह धन-धान्य पुत्रादि से संयुक्त हो जायेगा। मेरी उस पर कृपा होगी

इसमें संशय नहीं। मेरे इस महात्म्य को, मेरी उत्पत्ति की पवित्र कथाओं को एवं युद्ध में मेरे पराक्रम को, जो मनुष्य सुनेगा वह सर्वथा निर्भय हो जायेगा। मेरे महात्म्य सुनने वाले मनुष्यों के शत्रु नष्ट हो जाते हैं, कल्याण प्राप्त होता है और कुल आनन्दित रहता है। सभी शान्ति-कर्मों में देखने पर, ग्रहों की दारूण पीड़ायें निवृत्त हो जाती हैं। मनुष्य का देखा हुआ बुरा स्वप्न, सुख स्वप्न हो जाता है। बालग्रहों द्वारा पीड़ित बालकों के लिये यह महात्म्य शान्तिदायक है। मनुष्यों में फूट हो जाने पर यह महात्म्य मित्रता कराने में परम उत्तम है। सभी दुराचारियों के बल की भली-भांति नाश कर देता है। पढ़ने से ही राक्षस, भूत, पिशाच आदि का नाश हो जाता है और मेरा यह सारा महात्म्य मेरी सन्निधि प्राप्त करा देता है। पुष्प, अर्घ्य, दीप, धूप, गंध तथा उत्तम दीपों द्वारा मेरे पूजन से, ब्राह्मणों को भोजन कराने में, होम से, प्रतिदिन के अभिषेक से और भी अनेक प्रकार के भोगों (पदार्थों) के दान से, वर्ष भर जो मेरे अर्पण करके आराधना करते हैं, इससे जो मुझे प्रसन्नता होती है वही प्रसन्नता मेरे इस महात्म्य के एक बार सुनने से हो जाती है। इससे सुनते ही सब पाप नष्ट हो जाते हैं फिर आरोग्य प्राप्त हो जाता है। मेरी उत्पत्तियों का कीर्तन तो सभी भूतों से रक्षा करता है। युद्ध में वर्णित मेरा जो चरित्र दुष्ट दैत्यों के नाश करने वाला है उसके श्रवण करने पर मनुष्य को बैरियों से किसी प्रकार का भय नहीं रहता। हे देवतागण! तुम लोगों ने जा मेरी स्तुतियां की हैं एवं ब्रह्मऋषियों ने जो की हैं और ब्रह्माजी ने जो की हैं, वे सभी मंगलमयी बुद्धि देती हैं। वन में, शून्य-स्थान पर अथवा वन की अग्नि से घिर जाने पर, शून्य-स्थान में डाकूओं से घिर जाने पर, शत्रुओं द्वारा पकड़े जाने पर अथवा वन में शेर चीता एवं जंगली हाथियों के पीछा करने पर, क्रोध में आकर राजा ने वध की आज्ञा दे दी

हो या कैद में पड़ गया हो अथवा महासमुद्र में जहाज पर बैठ जाने के बाद भारी तूफान आ जाए, उससे जहाज डगमगाने लगे ऐसे अवसर पर, घोर संग्राम में शस्त्रों का प्रहार होने लग जाए, सब प्रकार की बाधायें पड़ रही हों, किसी महापीड़ा से व्याकुल हो, इस प्रकार की सभी घोर विपत्तियों से, इस मेरे चरित्र का स्मरण करने वाला पुरुष छूट जाता है।

आठवां दिन

8. महागौरी

श्वेते वृषे समारूढा श्वेताम्बरधरा शुचिः।
महागौरी शुभं दद्यान्महादेवप्रमोददा॥

मां दुर्गा जी की आठवीं शक्ति का नाम महागौरी है। दुर्गा पूजा के आठवें दिन महागौरी की उपासना का विधान है। इनकी शक्ति अमोघ और सद्यः फलदायिनी है। उनकी उपासना से भक्तों के सभी कल्मष धुल जाते हैं।

पाठ प्रारम्भ

तेरहवां अध्याय

राजा सुरथ और वैश्य को देवी का वरदान

ऋषि बोले—हे राजन्! इस प्रकार मैंने देवी जी का उत्तम महात्म्य तुम्हें कर सुनाया। जिसने इस जगत् को धारण कर रखा है, वह देवी इस प्रकार के प्रभाव वाली है। वही देवी विद्या उत्पन्न करती है। उसी विष्णु की माया ने ही हे राजन्! तुमको, इस वैश्य को तथा और भी विवेकवान जनों को मोहित कर दिया। यह पहले भी मोहित थे फिर आगे भी मोहित होंगे, इसलिये हे महाराज! तुम उसी परमेश्वरी की शरण में आ जाओ। क्योंकि वही देवी, आराधना करने पर, मनुष्यों को भोग एवं मोक्षादि प्रदान किया करती है।

मार्कण्डेय ऋषि बोले— क्रोष्टुकि जी! इस प्रकार ऋषि की बात सुनकर राजा सुरथ ने उत्तम व्रतधारी महाभाग मेधा ऋषि को प्रणाम किया तथा ममता और राज्य आदि के हरण से दुःखी होकर तत्काल ही वह राजा तप करने चला गया वह वैश्य भी नदी के समीप जाकर भगवती के दर्शनार्थ देवी के सूक्त का तप करने चला गया वह वैश्य भी नदी के समीप जाकर भगवती के दर्शनार्थ देवी के सूक्त का जप करने

लगा और फिर राजा तथा वैश्य दोनों नदी के समीप मुत्तिका से देवी की मूर्ति बनाकर प्रतिदिन पुष्प धूप और हवन तर्पण आदि से धीरे-धीरे थोड़ा आहार करते हुये, निराहार होकर, एकाग्रता से देवी जी में मन लगाकर, एकचित्त होकर के देवीजी के अराधना करने लगे। उन दोनों ने बलि प्रदान के समय अपने अंगों के रुधिर का प्रोक्षण किया। इसी प्रकार संयमपूर्वक तीन वर्ष पर्यन्त आराधना करते रहे।

तब तो जगत को धारण करने वाली देवी ने प्रत्यक्ष होकर दर्शन दिया और तब राजा से चण्डिका देवी जी बोलीं—हे राजन्! कुलनन्दन! तुम दोनों जिस अभीष्ट की प्राप्ति के लिये मेरी प्रार्थना करते रहे हो, वह मुझसे मांगो। मैं प्रसन्न हूं। तुम्हें सब कुछ दूंगी।

मार्कण्डेय जी बोले—तब राजा ने तो दूसरे जन्म में अक्षय रहने वाला राज्य मांगा और इस जन्म में शत्रुसेना का बलपूर्वक नाश करके फिर अपने राज्य की प्राप्ति का वर मांगा। वैश्य का तो चित्त संसार से खिनन हो चुका था। इसलिये उस बुद्धिमान ने उस ज्ञान का वर मांगा जिसके द्वारा संसार की अहंता ममतात्मक आसक्ति नष्ट हो जाये।

देवी बोली—हे राजन्! थोड़े दिनों तक तुम अपना राज्य पा लोगे, कठिनता के बिना ही अपने शत्रुओं का नाश करोगे। वहीं पर तुम्हारा राज्य स्थिर हो जायेगा। फिर देहान्त होने पर सूर्यदेव के अंश द्वारा जन्म पाकर, इस पृथ्वी पर आप सावर्णिक नाम के मनु होंगे। हे श्रेष्ठ वैश्य! तुमने जो उत्तम वर मांगा है, मैं उस वर को देती हूं। मोक्ष प्राप्ति के लिये तुम्हें उस ज्ञान की प्राप्ति होगी। मार्कण्डेय जी बोले— इस प्रकार देवी

जी ने उन्हें अभिलाषित वर दिये। फिर उन दोनों की भक्तिपूर्वक की हुई स्तुति से प्रसन्न होकर देवी तत्काल ही अन्तर्धान हो गई। इस प्रकार वह क्षत्रिय-श्रेष्ठ सुरथ देवी से वर पाकर फिर सूर्य से उत्पन्न होकर सावर्णि नामक मनु होगा।

माता की इस स्तुति का पाठ सभी प्रकार के दुःख, कष्ट एवं भय का नाश करने वाला तथा रिद्धि-सिद्धि और मोक्ष प्रदायक है।

देवी सूक्त

भगवती बोलीं– मैं रुद्र, वसु, आदित्य और विश्वेदेव रूप से सर्वत्र विचरती हूं। मित्र, वरुण, इन्द्र, अग्नि और अश्विनी कुमारों को भी मैंने ही धारण कर रखा है। सोम, याग, विश्वकर्मा, सूर्य और ईश्वर नाम के देव मैंने ही धारण कर रखे हैं। जो देवताओ के उद्देश्य से प्रचुर हवि युक्त सोमयागादि का अनुष्ठान करते हैं उन यजमानों का फल मुझ में विद्यमान है। इस ब्रह्माण्ड की अधिष्ठात्री पार्थिव और अपार्थिव देने वाली मैं ही हूं। ब्रह्म साक्षात् सम्वित ज्ञान रूपा मैं हूं। यह ज्ञान ही सब उपासनाओं का मूल है। मैं ही अनन्त जीवों में प्रविष्ट हूं। देवता इस प्रकार अनेक भावों से मेरी उपासना करते हैं। जीव जो अन्नादि खाद्य द्रव्य भक्षण करता है, देखता है व प्राण धारण करता है तथा सुनता है यह सब क्रियायें मेरे द्वारा ही सिद्ध होती

हैं। जो मुझको इस दृष्टि से नहीं देख सकते वे नाश को प्राप्त होते हैं। हे सौम्य! तुमसे जो तत्व कहे हैं उन्हें श्रद्धापूर्वक सुनो। मैं यह उपदेश स्वयं दे रही हूं। देवता और मनुष्यों द्वारा यही सेवित है। मैं जिसे चाहती हूं उसे उच्च पद प्रदान करती हूं, ब्रह्म बनाती हूं तथा ऋषि और सर्वज्ञान सम्पन्न सुमेधा बनाती हूं। रुद्र के लिये धनुष खेंचती हूं। इस प्रकार मैं सर्वत्र व्याप्त हूं। मेरी आत्मा ने जगत पिता को उत्पन्न किया। इसके ऊपरी भाग में आनन्दमय कोष के अन्दर विज्ञानमय कोष में तेरा कारण अवस्थित है। मैं समस्त भुवनों में प्रविष्ट होकर रहती हूं। स्वर्गलोक में मेरे शरीर से स्पष्ट हैं। मैं जल, वायु की भांति प्रथित होती हूं तभी ही यह सारी सृष्टि आरम्भ होती है। इस स्वर्ग तथा मर्त्य लोक के परे भी विद्यमान हूं। यही तो मेरी महिमा है।

अपराध क्षमापन स्तोत्र

माता मैं मन्त्र, यन्त्र, स्तुति, आवाह्न, ध्यान, स्तुति-कथा, मुद्रा करना कुछ भी नहीं जानता हूं। केवल तुम्हारा भजन किसी प्रकार करता हूं। मेरे अपराध क्षमा करो। अज्ञान से, दरिद्रता से, विरह से लिप्त हूं। हे देवी! अपनी चरण सेवा में त्रुटि समझते हुये भी तुम मेरे अपराध क्षमा करो। मेरा सर्व प्रकार से उद्धार करो। पृथ्वी की भाँति, पुत्रों के सरल स्वभाव से, अपने पुत्रों के अपराध क्षमा करो। हे शिवे! मेरा त्याग कभी न करो। समुचित रूप से मेरा ध्यान रखो। हे जगत्माता! तेरी अराधना नहीं कर पाता हूं। तब भी तुम्हारा स्नेह मेरे ऊपर निरन्तर रहे। सभी को छोड़कर आपकी शरण में रहूंगा। मेरे इस शरीर को उपयोगी बनाओ। हे

माता! यदि आपकी कृपा मुझ पर न हुई तो मैं बिना सहारा इस जगत के उदर पोषक ही बना रहूंगा। स्वपाकी जलपाकी माधुपाकी होकर भी निराश्रित रहूंगा। चिरकाल तक कोटि सुवर्ण मुद्रा की इच्छा रखता हुआ तुम्हारा चिन्तन करूं। हे जननी! जपनीय जप विधियों का कैसे ज्ञान करूं? चिता की भस्म लेपकर; हलाहल विष का पान कर, दिशा का वस्त्र धारण कर, जटाधारी बन कण्ठ में सर्पों को लपेटे पशुपति शंकर के पतिवाली, कपाल हाथ में लिये भूतेशों की पालन करने वाली, जगदीश की पदवी देने वाली हे भवानी! तुम्हारी शरण में फल मिलेगा। न मोक्ष की अकांक्षा है, न संपूर्ण वैभव की ही इच्छा है, न मुझे ज्ञान की अपेक्षा है। शशिमुखी की सेवा करता रहूं यही इच्छा है और कोई भी इच्छा नहीं है। अब हे जननी! तुमसे मांगता हूं कि जन्म लेकर मुझे तुम्हारी चरण सेवा में लिप्सा रहे। हे मृडानी! रुद्राणी! शिवे! शिव भवानी का जप करूं। हे श्यामे! तुम यदि किंचित मात्र भी मुझ अनाथ पर कृपा कर दो तो मेरा कल्याण हो जाये। तुम्हारा भजन करता रहूं। हे दुर्गे! दया देने वाली मैं भूख-प्यास के वशीभूत होकर भी तुम्हारा स्मरण करता रहूं। हे जगदम्बे! इससे विचित्र बात क्या हो सकती है कि तुम अपनी कृपा से मुझे परिपूर्ण कर दो। अपराधी जानते हुए भी हे माता! मेरे जैसे उपेक्षित पुत्र को भूल मत जाओ मेरे समान पापी इस संसार में कोई नहीं है। तुम्हारे सम्मान पापों को हरने वाला कोई नहीं है। ऐसा जानकर हे महादेवी! तुम जो उचित समझो वैसा करो।

सिद्ध कुजिका स्तोत्र

मन्त्र–"ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे। ॐ ग्लौं हुं क्लीं जूं सः ज्वालय-ज्वालय ज्वल-ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा।"

कुंजिका स्तोत्र– शिव स्वरूपिणी, मधु-कैटभ नाशिनी महिषासुरघातिनी और शुम्भ-निशुम्भ नामक 'दैत्य को नष्ट करने वाली आपको नमस्कार है। हे महादेवी! आप मेरे जप को सिद्ध करें, आप 'ऐं' रूप से जगत की उत्पत्ति 'ह्रीं' रूप से पालन 'क्लीं' रूप से संहार करने वाली, चामुण्डा रूप से चण्ड नामक दैत्य का वध करने वाली ये स्वरूप से भक्तों को अभीष्ट वर देने वाली, 'विच्चे' रूप से अभय प्रदान करने वाली, नवार्ण मन्त्र स्वरूप वाली हे जगदम्बा! आपको नमस्कार है। धां धीं धूं स्वरूप धूर्जटी (शंकर) की पत्नी, वां वीं वूं स्वरूप वाग् (वाणी) की अधीश्वरी सरस्वती, क्रां क्रीं क्रूं रूपिणी कालिका, शां शीं शूं रूपिणी शान्ति देवी! मेरा कल्याण करें। हुं हुं स्वरूपवाली, हुंकार रूपिणी देवी, जं जं जं रूपिणी जम्भनादिनी देवी तथा भ्रां भ्रीं भ्रूँ स्वरूप वाली भैरवी, भद्रा तथा भवानी आपको बारम्बार नमस्कार है। 'अं कं चं टं तं.) से 'कुरु कुरु स्वाहा' तक पाठ करें। पां पीं पूं स्वरूपिणी पार्वतीय, पूर्णाः खां खीं खूं रूपिणी खेचरी एवं म्लां म्लीं म्लूं मूल– विस्तीर्णरूपिणी कुंजिका देवी को नमस्कार है। तथा सां सीं सू स्वरूप वाली दुर्गा सप्तशती के समस्त मन्त्रों की सिद्धि हे देवी! मुझे प्राप्त हो।

नवरात्रों का कन्या-पूजन

श्री दुर्गा के भक्त को देवी जी की अतिशय प्रसन्नता के लिये नवरात्रि में अष्टमी अथवा नवमी को कुमारी कन्याओं को अवश्य खिलाना चाहिए। इन कुमारियों की संख्या ९ हो तो अत्युत्तम, शक्ति न होने पर दो ही सही। किन्तु भोजन करने वाली कन्यायें 2 वर्ष से कम तथा 10 वर्ष से ऊपर नहीं होनी चाहिये। दो वर्ष की कन्या कुमारी, तीन वर्ष की कन्या त्रिमूर्ति, चार वर्ष की कल्याणी, पांच वर्ष की रोहिणी, छः वर्ष की कालिका, सात वर्ष की चण्डिका, आठ वर्ष की शाम्भवी, नौ वर्ष की दुर्गा तथा दस वर्ष की कन्या सुभद्रा के समान मानी जाती हैं। क्रमशः इन सब कुमारियों के नमस्कार मंत्र ये हैं—१. कुमार्य्यै नमः २. त्रिमूर्त्यै नमः ३. कल्याण्यै नमः ४. रोहिण्यै नमः ५. कालिकायै नमः ६. चण्डिकायै नमः ७. शाम्भव्यै नमः ८. दुर्गायै नमः ९. सुभद्रायै नमः। कुमारियों में हीनांगी, अधिकांगी, कुरूपा न होनी चाहिये। पूजन करने के बाद जब कुमारी देवी भोजन कर ले तो उनसे अपने सिर पर अक्षत् छुड़वायें और उन्हें दक्षिणा दें। इस तरह करने पर महामाया भगवती अत्यन्त प्रसन्न होकर मनोरथ पूर्ण कर देती हैं।

(नवरात्रे में इस पुस्तक की नौ प्रतियां कुमारियों को देने से आपको विशेष आनन्द की अनुभूति होगी।)

नौवां दिन

९. सिद्धिदात्री

सिद्धगन्धर्वयक्षाद्यैरसुरैरमरैरपि ।
सेव्यमाना सदा भूयात् सिद्धिदा सिद्धिदायिनी॥

मां दुर्गा जी की नवीं शक्ति का नाम सिद्धिदात्री है। ये सभी प्रकार की सिद्धियों को देने वाली हैं। नवदुर्गाओं में मां सिद्धिदात्री अन्तिम है। इनकी उपासना पूर्ण कर लेने के बाद भक्तों की सभी प्रकार की कामनाओं की पूर्ति हो जाती है।

माता के लिए बनाए नैवेद्य की थाली मां को भोग समर्पण करके निम्न प्रार्थना करें। तत्पश्चात दुर्गा चालीसा, विन्ध्येश्वरी चालीसा, विन्ध्येश्वरी स्तोत्र का पाठ करके श्री दुर्गा जी की आरती करके नवरात्रों के नौ दिन की पूजा समाप्त हो जाती है। व्रत रखने वाले नर-नारी इस प्रकार से पूजा कर चुकने पर भोजन करके सामान्य व्यवहार प्रारम्भ कर लें।

पाठ प्रारम्भ

मां का भोग

भोगे हे भोगो मैया, भोगे हे भोगो, ते मेरी अबला माय तेरा मन यूं ही पतियायो।
बथुये की भाजी देवा अथक बनाई खीर खांड देवा और मिठियाई,
सन्त पयारों का दाना, बाले भोलों का दाना, निपट गरीबों का दाना।
माता ले घर आये तै मेरा मन यूं ही पतियायो॥१॥
ऐ! मां दास धनुवा तेरा भोग ले आया,
मुरारी भगत! तेरा भोग ले आया, राज रे रूपेश्वर! तेरा भोग ले आया।
धानु रे भक्त तेरा भोग ले आया, राजा रे हरिश्चन्द्र तेरा भोग ले आया,
रानी तारादे तेरा भोग ले आई, सन्त और सेवक तेरा भोग ले आये।
भक्त सवैये तेरा भोग ले आये, भोगो हे भोगो मैया भोगो हे .....॥२॥
सोने का गड़वा गंगाजल पानी, सोने की झारी गंगाजल पानी।
ऐसा ठंडग ठंडरा पानी, ऐसा मिठरा-मिठरा पानी।

पियो-पियो मेरी आदिभवानी, नगरकोट रानी।

आशादेवी, मनसादेवी, अष्टभुजी छत्र-भुजी।

तै मेरी कालका महारानी, पियो हे पियौ मैया..............

पानों का बीड़ा तेरा भोला जन लायां; पान सुपारी धानु जन लाया।
चाबो हे चाबो मैया, चाबो हे चाबो चण्डी, मेरा मन यूं ही पतियांयो।

श्री दुर्गा चलीसा

दोहा– जय श्री दुर्गा, अम्बिका, जगत पालिनी मात॥
आदिशक्ति अनन्त है, महिमा वरन न ज़ात॥
नमो नमो दुर्गे सुख करनी, नमो नमो अम्बे दुःख हरनी।
निराकार है ज्योति तुम्हारी, तिहूं लोक फैलि उजियारी।
शशि लिलार मुख महा विशाला, नेत्र लाल भृकुटी विकराला।
रूप मातु को अधिक सुहावे, दरश करत जन अति सुख पावे।
तुम संसार शक्ति मय कीना, पालन हेतु अन्न धन दीना।
प्रलयकाल सब नाशन हारी, तुम गौरी सब शंकर प्यारी।
अन्नपूरणा हुई जग पाला, तुम ही आदि सुन्दरी बाला।
शिव योगी तुम्हारे गुण गावें, ब्रह्मा विष्णु तुम्हें नित्य ध्यावैं।

रूप सरस्वती को तुम धारा, दे सुबुद्धि ऋषि मुनिन उबारा।
धरा रूप नरसिंह को अम्बा, प्रगट भई फाड़कर खम्बा।
रक्षा करि प्रह्लाद बचायो, हिरणाकुश को स्वर्ग पठायो।
लक्ष्मी रूप धरो जग माहीं, श्री नारायण अंग समाहीं।
क्षीरसिंधु में करत विलासा, दयासिंधु दीजै मन आसा।
हिंगलाज में तुम्हीं भवानी, महिमा अमित न जात बखानी।
मातंगी धूमावती माता, भूवनेश्वरि बगला सुख दाता।
श्री भैरव तारा जग तारिणी, क्षिन्नभाल भव दुःख निवारिणी।
केहरि वाहन सोहे भवानी, लांगुर वीर चलत अगवानी।
कर में खप्पर खड्डग विराजे, जाको देख काल डर भाजे।
साहे अस्त्र और तिरशूला, जाते उठत शत्रु हिय शूला।
नगर कोटि में तुम्हीं विराजत, तिहूं लोक में डंका बाजत।
शुम्भ निशुम्भ दानव तुम मारे, रक्तबीज से असुर संहारे।
महिषासुर नृप अति अभिमानी, जेहि अधिभार महीअकुलानी।
रूप कराल काली को धारा, सेन सहित तुम तिहि संहारा।

परी गाढ़ सत्तन पर जब-जब, भई सहाय मात तुम तब-तब।

अमरपुरी अरु सब लोका, तब महिमा सब रहे अशोका।
ज्वाला में हैं ज्योति तुम्हारी, तुम्हें सदा पूजे नर नारी।
प्रेम भक्ति से जो जस गावै, दुःख दरिद्र निकट नहीं आवै।
ध्यावें तुम्हें जो नर मन लाई, जनम मरण ताको छूट जाई।
जोगी सुर मुनि कहत पुकारी, योग नहीं बिन शक्ति तुम्हारी।
शंकर आचरज़ तप कीनों, काम अरु क्रोध जीति सब लीनो।
निशदिन ध्यान धरो शंकर को, काहुकाल नहीं सुमिरो तुमको।
शक्ति रूप को मरम न पायो, शक्ति गई तब मन पछितायो।
शरणागत हुई कीर्ति बखानी, जय-जय जय जगदम्बा भवानी।
भई प्रसन्न आदि जगदम्बा, दई शक्ति नहीं कीन विलंबा।
मोको मात कष्ट अति घेरो, तुम बिन कौन हरे दुःख मेरो।
आशा-तृष्णा निपट सतावे, रिपू मूरख मोहि अति डरपावे।
शत्रु नाश कीजै महारानी, सुमिरौं इकचित तुम्हें भवानी।
करो कृपा हे मातु दयाला, ऋद्धि-सिद्धि दे करहु निहाला।
जब लगी जियौं दया फल पाऊं, तुम्हरो जस मैं सदा सुनाऊं।
दुर्गा चलीसा जो गावै, सब सुख भोग परम पद पावै।
देवीदास शरण निज जानी, करहु कृपा जगदम्ब भवानी।

दोहा– बसहु देवि मम उर सदा, भक्तजन की तुम कांति।
लसहु भक्ति मम उर बसहु, शांति शांति मां शांति॥

श्री विन्ध्येश्वरी चालीसा

दोहा– नमो नमो विन्ध्येश्वरी, नमो नमो जगदम्ब।
संन्त जनों के काज में, करती नहीं बिलम्ब।

॥चौपाई॥

जय-जय-जय विन्ध्याचल रानी, आदिशक्ति जगविदित भवानी।
सिंहवाहिनी जय जगमाता, जय-जय जय त्रिभुवल सुखदाता।
कष्ट निवारनि जै जग देवी, जै जै जै असुरा सुर देवी।
महिमा अमित अपार तुम्हारी, शेष सहस मुख वर्णन हारी।
दीनन को दुःख हरत भवानी, नहिं देख्यो तुम सम कोउ दानी।
सबकी मनसा पुरवत माता, महिमा अमित जगतविख्याता।

जो जन ध्यान तुम्हारो लावै, सो तुरतहि वांछित फल पावै।
तुम वैष्णवी तुही रुद्रानी, तुही शारदा अरु ब्रह्मानी।
रमा राधिका श्यामा काली, तु ही मातु सन्तन प्रतिपाली।
उमां माधवी चण्डी ज्वाला, बेगि मोहिं पर होहु दयाला।
तुही हिंगलाज महारानी, तु ही शीतला अरु विज्ञानी।
दुर्गा दुर्गा विनाशिनी माता, तुही लक्ष्मी जग सुख दाता।
तु ही जान्हवी अरु इन्द्रानी, हेमावती अम्बा निर्वानी।
अष्टभुजी वाराहिनी देवा, करत विष्णु शिव तेरी सेवा।
चौसट्टी देवी कात्यायनी, गौरी मंगला सब गुन खानी!
पाटन मुम्बा दन्त कुमारी, भद्रकाली सुन विनय हमारी।
वज्र धारिणी शोकनाशिनी, आयु रक्षिणी विन्ध्यवासिनी।
जया और विजया बैताली, मात सुगन्धा अरु विकराली।
नाम अनन्त तुम्हार भवानी, बरनै किमि मानुष अज्ञानी।

जापर कृपा मातु तब होई, सो वह करे मन चाहे जोई।
कृपा करहु मोपर महारानी, सिद्ध करिये अम्बे मम बानी।
जो नर धरै मात कर ध्याना, ताकर सदा होय कल्याणा।
विपति तांहे सपने नहिं आवे, जो देवी का जाप करोवे।
जो नर कहं ऋण होय अपारा, जो नर पाठ करै शत बारा।
निश्चय ऋण मोचन है जाई, जो मन पाठ करै मन लाई।
अस्तुति जो नर पढ़े पढ़ावे, या जग में सो बहु सुख पावे।
जाको व्याधि सतावै भाई, जाप करत सब दूरि पराई।
जो नर अति बन्दी महं होई, बार हजार पाठ कर सोई।
निश्चय बन्दी ते छुट जाई, सत्य वचन मम मानहु भाई।
जापर जो कछु संकट होई, निश्चय देविहिं सुमिरन सोई।
जा कहं पुत्र होय नहिं भाई, सो नर या विधि करै उपाई।
पांच वरस जो पाठ करावै, नवरात्रों महं विप्र जिमावै।

निश्चय होहिं प्रसन्न भवानी, पुत्र देहिं ताकहुं गुणखानी।
ध्वजा नारियल आनि चढ़ावै, विधि समेत पूजन करवावै।
नित प्रति पाठ करै मन लाई, प्रेम सहित नहिं आन उपाई।
यह श्री विन्ध्याचल चालीसा, रंक पढ़त होवे अवनीसा।
यह नहीं अचरज मानहूं भाई, कृपा दृष्टि जापर हुई जाई।
जै जै जै जग मातु भवानी, कृपा करहु मोहिं पर जन जानी।
विन्ध्यवासिनी मात अखण्डे, तुहि ब्रह्माण्ड शक्ति ज़ितखण्डे।
यह चालीसा जो जब गावे, तब ही मनवांछित फल पावे।
दोहा– विन्ध्येश्वरी चालीसा यह, पाठ करें उरि धारि।
अष्ट सिद्धि नवनिधि फल, लहै पदारथ चारि।।

श्री दुर्गा जी की आरती

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामा गौरी। तुमको निशि दिन ध्यावत ब्रह्मा हरि शिवजी।।

मांग सिंदूर विराजत, टीको मृगमद को, मैया टीको मृगमद को।

उज्जवल से दोऊ नैना, निर्म दोऊ नैना, चन्द्रवदन नीको।
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजै, मैया पीताम्बर राजै।
रक्त पुष्प गल माला, रक्त पुष्प गल माला, कंठन पर साजै।
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती, मैया नासाग्रे मोती।
कोटिक चन्द्र दिवाकर, कोटिक चन्द्र दिवाकर, राजत सम ज्योति।
केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारी, मैया खड्ग खप्पर धारी।
जो नर तुमको सेवत, जो जन तुमको सेवत, तिनके दुःखहारी।
मधुकैटभ मदहरनी, महिषासुर घाती, मैया महिषासुर घाती।
धूम्रविलोचन नैना, मैया धूम्रविलोचन नैना, निशिदिन मदमाती।
चण्ड मुण्ड संहारे, शोणित बीज हरे, मेरी मैया शोणित बीज हरे।
शुंभ निशुंभ पछाड़े, मां ने शुंभ निशुंभ पछाड़े, निर्भय राज करे।
ब्रह्मादिक, रुद्रादिक इन्द्रादिक ध्यावें, मैया सनकादिक ध्यावें।
सुर नर मुनि जन सेवें तुमको, वे सब मनवांछित फल पावें।
चौंसठ योगिनी गावत, नृत्य करत भैरो, मैया नृत्य करत भैरो।
बाजत ताल मृदंगा, बाजत ढोल मृदंगा और बाजत डमरू।

कंचन थल विराजत अगर कपूर बाती, मैया अगर कपूर बाती।
श्री मालकेतु में राजत, नगरकोटि में राजत, कोटि रतन ज्योति।
तुम ब्रह्माणी, तुम रुद्राणी तुम कमलारानी, मैया तुम कमला रानी।
आगम निगम बखानी, चारो वेद बखानी, तुम शिव पटरानी।
भुजा चार अति शोभित, वर मुद्रा धारी, मैया वर मुद्रा धारी।
मनवांछित फल पावत, सेवत नर नारी, हां सेवत नर नारी।
श्री अम्बे जी की आरती, जो कोई नर गावे, मैया जो कोई नर गावे।
कहत शिवानन्द स्वामी, भनत शिवानन्द स्वामी, सुख सम्पत्ति पावे।

आरती श्री देवी जी की

ओ अम्बे तू है जगदम्बे, काली जय दुर्गे खप्पर वाली,
तेरे ही गुन गाये भारती, ओ मैया हम सब उतारें तेरी आरती।
माता तेरे जगत के भक्त जनों पर भीड़ पड़ी है भारी।
दानव दल पर टूट पड़ो मां करके सिंह सवारी।

सौ सौ सिंहों से तू बलशाली है अष्ट भुजाओं वाली।

दुष्टों को तू ही ललकारती, ओ मैया........

मां बेटे का है इस जग में बड़ा ही निर्मल नाता।
पूत कपूत सुने हैं पर ना माता सुनी कुमाता।
सब पर करुणा दर्शाने वाली, सबको हरसाने वाली।

नैया भंवर से उबारती, ओ मैया ....

नहीं मांगते धन और दौलत ना चांदी ना सोना।
हम तो मांगते मां तेरे चरणों में छोटा-सा कोना।
सब पर अमृत बरसाने वाली, विपदा मिटाने वाली

सतियों के सत को संवारती, ओ मैया ....

आदि शक्ति भगवती भवानी, हो जग की हितकारी,
जिसने याद किया आई मां, करके सिंह सवारी,
मैया करती कृपा किरपाली, रखती जन की रखवाली,

दुष्टों को पल में माता मारती, ओ मैया........

भक्त तुम्हारे निशदिन मैया, तेरे ही गुण गावैं,
मनवांछित वर दे दे इनको, तुझसे ही ध्यान लगावैं।
मैया तू ही वर देने वाली, जाय न कोई खाली.

दर पै तुम्हारे माता मांगते ओ मैया...........।

चरण शरण में खड़े तुम्हारी, ले पूजा की थाली,
वरद हस्त सर पर रख दो, मां संकट हरने वाली,
मैया भर दो भक्ति रस प्याली, अष्ट भुजाओं वाली,
भक्तों के कारज तू ही सारती, ओ मैया.........।

विन्ध्येश्वरी स्तोत्र

निशुम्भ शुम्भ गर्जनी, प्रचण्ड खण्ड खण्डनी। बने रणे प्रकाशिनी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
त्रिशूल मूण्ड धारिणी, धरा विघात हारिणी। गृहे-गृहे निवासिनी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
दरिद्र दुःख हारिणी, सुता विभूति कारिणी, वियोग शोक हारिणी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
लसत्सुलोल-लोचनं, लतासनं वरप्रदं। कपाल शूलधारिणी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
करो मुदा गदाधरा, शिवा शिवः प्रदायिनी। वरा वरानना शुभा, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
ऋषीन्द्र जामिनी प्रदं जामिनी प्रदं त्रिधास्य रूप धारिणी। जले थले निवासिनी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
विशिष्ट शिष्ट कारिणी, विशाल रूप धारिणी। महोदरे विलासिनी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥

पुरंदरादि सेविता, सुरारि वंश खण्डिता। विशुद्ध बुद्धि कारिणी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥

तारा रानी की कथा

माता के जगराते में महारानी तारा देवी की कथा कहने सुनने की परम्परा प्राचीन काल से चली आई है। बिना इस कथा के जागरण को सम्पूर्ण नहीं माना जाता है। माता के प्रत्येक जागरण में इसको सम्मिलित करने का परम्परागत विधान है। इस कलयुग में इस शक्ति की पूजा से ही भक्तों के मन की मनोकामना पूर्ण होती है और मन को शान्ति मिलती है। कथा इस प्रकार है-

महाराजा दक्ष की दो पुत्रियां तारा देवी एवं रूकमण भगवती दुर्गाजी की भक्ति में अटूट विश्वास रखती थीं। दोनों बहनें नियमपूर्वक एकादशी काव्रत किया करती थीं तथा माता के जागरण में प्रेम के साथ कीर्तन एवं महात्म्य कहा सुना करती थीं।

एकादशी के दिन एक बार भूल से छोटी बहन रुकमण ने मांसाहार कर लिया। जब तारा देवी को पता लगा तो उसे रुकमण पर बड़ा क्रोध आया और बोली- "तू है तो मेरी बहन, परन्तु मनुष्य देह पाकर भी तूने नीच योनि के प्राणी जैसा कर्म किया, तू तो छिपकली बनने योग्य है।" बड़ी बहन के मुख से निकले शब्दों को रुकमण ने शिरोधर्य कर लिया और साथ ही प्रायश्चित का उपाय पूछा। तारा ने कहा- "त्याग और परोपकार से सब पाप छूट जाते हैं।"

दूसरे जन्म में तारा देवी इन्द्रलोक की अप्सरा बनी और छोटी बहन रुकमण छिपकली योनी में

प्रायश्चित का अवसर ढूंढने लगी।

द्वापर युग में जब पाण्डवों ने अश्वमेघ यज्ञ किया तब उन्होंने दूत भेजकर दुर्वासा ऋषि सहित तैंतीस करोड़ देवताओं को निमन्त्रण दिया जब दूत दुर्वासा ऋषि के स्थान पर निमन्त्रण लेकर गया तो दुर्वासा ऋषि बोले—"यदि तैंतीस करोड़ देवता उस यज्ञ में भाग लेंगे तो मैं उसमें सम्मिलित नहीं हो सकता।" दूत तैंतीस करोड़ देवताओं का निमन्त्रण देकर वापिस पहुंचा और दुर्वासा ऋषि का वृतान्त पाण्डवों को कह सुनाया कि वह सब देवताओं को बुलाने के कारण नहीं आवेंगे।

यज्ञ आरम्भ हुआ। तैंतीस करोड़ देवता यज्ञ में भाग लेने आये। उन्होंने दुर्वासा ऋषि जी को न देखकर पाण्डवों से पूछा कि ऋषि को क्यों नहीं बुलवाया। इस पर पाण्डवों ने नम्रता सहित उत्तर दिया कि निमन्त्रण भेजा था परंतु वह अहंकार के कारण नहीं आए। यज्ञ में पूजन हवन आदि निर्विघ्न समाप्त हुए। भोजन के लिए भण्डारे की तैयारी होने लगी।

दुर्वासा ऋषि ने देखा कि पाण्डवों ने उनकी उपेक्षा कर दी है तो उन्होंने क्रोध करके पक्षी का रूप धारण किया, चोंच में सर्प लेकर भण्डारे में फेंक दिया। इसका किसी को कुछ भी पता नहीं चला। वह सर्प खीर की कढ़ाई में गिरकर छिप गया। एक छिपकली (जो पिछले जन्म में तारा देवी की छोटी बहन थी तथा बहन के शब्दों को शिरोधार्य कर इस जन्म में छिपकली बनी) सर्प का भण्डारे में गिरना देख रही थी। उसे त्याग व परोपकार की शिक्षा अब तक याद थी। वह छिपकली घर की दीवार पर चिपकी समय

की प्रतीक्षा करती रही। कई लोगों के प्राण बचाने हेतु उसने अपने प्राण न्यौछावर कर देने का मन ही मन निश्चय किया। जब खीर भण्डारे में दी जाने वाली थी तो सबकी आंखों के सामने वह छिपकली दीवार से कूदकर कढ़ाई में जा गिरी।

इस प्रकार लोग छिपकली को बुरा भला कहते हुए खीर की कढ़ाई को खाली करने लगे, उस समय उन्होंने उसमें मरे हुए सांप को देखा। अब सबको मालूम हुआ कि छिपकली ने अपने प्राण देकर उन सबके प्राणों की रक्षा की है। इस प्रकार उपस्थित सभी सज्जनों और देवताओं ने उस छिपकली के लिए प्रार्थना की कि उसे सब योनियों में उत्तम मनुष्य योनि प्राप्त हो तथा अन्त में मोक्ष को प्राप्त करे। तीसरे जन्म में छिपकली राजा स्पर्श के घर कन्या बनी। दूसरी बहन तारा देवी ने फिर मनुष्य का जन्म लेकर तारामति नाम से अयोध्या के प्रतापी राजा हरिश्चन्द्र के साथ विवाह किया।

राजा स्पर्श ने ज्योतिषियों से कन कुण्डली बनवाई। ज्यातिषियों ने राजा को बताया कि कन्या राजा के लिए हानिकारक सिद्ध होगी, शकुन ठीक नहीं है अतः आप इसे मरवा दीजिए। राजा बोला लड़की को मारना बहुत बड़ा पाप है। मैं उस पापी का भागी नहीं बन सकता। तब ज्योतिषियों ने विचार करके राय दी– "हे राजन्! आप एक लकड़ी के सन्दूक में ऊपर से सोना चांदी आदि जड़वा दें। फिर उस सन्दूक के भीतर लड़की को बन्द करके नदी में प्रवाहित करा दीजिए।"

सोना-चांदी जड़ित लकड़ी का सन्दूक अवश्य ही कोई लालच से निकाल लेगा और आपकी कन्या

को भी पाल लेगा। आपको किसी प्रकार का पाप नहीं लगेगा। ऐसा ही किया गया। और नदी में बहता हुआ सन्दूक काशी के समीप एक हरिजन को दिखाई दिया। वह सन्दूक को नदी से बाहर निकाल लाया। जब खोला उसमें सोना चांदी के अतिरिक्त रूपवान कन्या दिखाई दी।

उस हरिजन के कोई सन्तान नहीं थी। जब उसने अपनी पत्नी को वह कन्या दी तो उसकी खूशी का ठिकाना न रहा। उसने अपनी संतान के समान ही बच्ची को छाती से लगा लिया। भगवती की कृपा से उसके स्तनों में दूध उतर आया। पति-पत्नी ने प्रेम से कन्या का नाम 'रुक्को' रख दिया। जब वह कन्या विवाह योग्य हुई तो हरिजन ने उसका विवाह अयोध्या के सजातीय युवक के साथ बड़ी धूमधाम के साथ किया। इस प्रकार पहले जन्म की रुक्मण, दूसरे जन्म की छिपकली तथा तीसरे जन्म में रुक्को बन गई। रुक्को की सास महाराज हरिश्चन्द्र के घर सफाई आदि करने जाया करती थीं। एक दिन वह बीमार पड़ गई। निदान रुक्को महाराज हरिश्चन्द्र के घर काम करने के लिये पहुंच गई। महाराज की पत्नी तारामति ने रुक्को से कहा- "हे बहन! तुम यहां मेरे निकट आकर बैठो।" महारानी की बात सुनकर रुक्को बोली- "रानी जी मैं नीची जाति की भीलनी हूं, भला मैं आपके साथ बैठ सकती हूं।"

तब तारामति ने कहा- "बहन! पूर्व जन्म में तुम मेरी सगी बहन थी। एकादशी का व्रत खण्डित करने के कारण तुम्हें छिपकली की योनि में जाना पड़ा। जो होना था सो हो चुका। अब तुम अपने इस जन्म को सुधारने का उपाय करो तथा भगवती वैष्णो माता की सेवा करके अपना जन्म सफल बनाओ।" यह सुनकर

रुक्को को बड़ी प्रसन्नता हुई और उसने उसका उपाय पूछा। रानी ने बताया कि, "वैष्णों माता सब मनोरथों को पूरा करने वाली हैं। जो लोग श्रद्धापूर्वक माता का पूजन व जागरण करते हैं उनकी सब मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं।"

रुक्को खुश होकर माता की मनोती करते हुए बोली– "हे माता! यदि आपकी कृपा से मुझे एक पुत्र प्राप्त हो जाए तो मैं भी आपका पूजन व जागरण करवाऊंगी।" प्रार्थना को माता ने स्वीकार कर लिया। फलस्वरूप दसवें महीने उसके गर्भ से एक अत्यन्त सुन्दर बालक ने जन्म लिया परन्तु दुर्भाग्यवश रुक्को को माता का पूजन व जागरण कराने का ध्यान ही न रहा। परिणाम ये हुआ कि जब वह बालक पांच वर्ष का हुआ तो उसे एक दिन तेज बुखार आ गया और तीसरे दिन उसे चेचक (माता) निकल आई। रुक्को दु:खी होकर अपने पूर्व जन्म की बहन तारामति के पास गई और बच्चे की बीमारी का सब वृतान्त कह सुनाया।

तब तारामति ने कहा– "तू जरा ध्यान करके देख कि तुझसे माता के पूजन में कोई भूल तो नहीं हुई।" इस पर रुक्को को छ: वर्ष पहले की बात का ध्यान आ गया और उसने अपना अपराध स्वीकार किया और कहा कि बच्चे को आराम आने पर अवश्य जागरण करवाऊंगी।

भगवती की कृपा से बच्चा दूसरे दिन ही ठीक हो गया। तब रुक्को ने देवी के मन्दिर में जाकर पण्डित से कहा कि मुझे अपने घर माता का जागरण कराना है सो आप मंगलवार को मेरे घर पधार कर कृतार्थ करें।

पण्डित जी बोले– "अरी रुक्को! तू यहीं पांच रुपये दे जा। हम तेरे नाम से यहीं मन्दिर में जागरण करवा

देंगे। तू नीच जाति की स्त्री है इसलिए हम तेरे घर चलकर देवी का जागरण नहीं कर सकते।'' रुक्को ने कहा– ''हे पण्डित जी माता के दरबार में तो ऊंच-नीच का कोई विचार नहीं होता। वे तो सब भक्तों पर समान रूप से कृपा करती हैं। अत: आपको कोई एतराज नहीं होना चाहिए।'' इस पर पण्डितों ने आपस में विचार करके कहा– ''यदि महारानी तारामति तुम्हारे जागरण में पधारें तो हम भी स्वीकार कर लेंगे।

यह सुनकर रुक्को महारानी तारमति के पास गई और सब वृतान्त कह सुनाया। तारामति ने जागरण में शामिल होना सहर्ष स्वीकार कर लिया। जिस समय रुक्को पण्डित से यह कहने गई कि महारानी जागरण में आयेगी उस समय सैना नाई ने यह सुन लिया और महाराज हरिश्चन्द्र को जाकर सूचना दी।

राजा ने सैना नाई से सब बात सुनकर कहा कि तेरी बात झूठी है। महारानी हरिजनों के घर जागरण में नहीं जा सकती। फिर भी परीक्षा लेने के लिए राजा ने रात को अपनी ऊंगली पर थोड़ा चीरा लगा लिया, जिससे नींद न आये। रानी तारामति ने जब यह देखा कि जागरण का समय हो रहा है परन्तु महाराज को नींद नहीं आ रही है तो उसने माता वैष्णों से मन ही मन प्रार्थना की कि, ''हे माता आप किसी उपाय से राजा को तुरन्त सुला दें ताकि मैं जागरण में सम्मिलित हो सकूं।''

राजा को नींद आ गई। रानी तारामति रोशनदान से रस्सी बांधकर महल से उतरी और रुक्को के घर जा पहुंची। उस समय जल्दी के कारण रानी के हाथ का रेशमी रुमाल तथा पांव की एक पायल रास्ते में गिर गई। उधर थोड़ी देर बाद राजा हरिश्चन्द्र की नींद खुल गई। तब वह रानी का पता लगाने के लिए

निकल पड़ा। मार्ग में पायल और रुमाल उसने देखे और जागरण वाले स्थान पर जा पहुंचा। राजा ने दोनों चीजें रास्ते से उठाकर अपने पास रख लीं और जहां जागरण हो रहा था वहां पर एक कोने में चुपचाप बैठकर सब दृश्य देखने लगा।

जब जागरण समाप्त हुआ तो सबने माता की आरती व अरदास की। उसके बाद प्रसाद बांटा गया। रानी तारामति को जब प्रसाद मिला तो उसने झोली में रख लिया। यह देखकर लोगों ने पूछा कि आपने प्रसाद क्यों नहीं खाया। यदि आप प्रसाद नहीं खायेंगी तो कोई भी नहीं खायेगा। रानी बोली– "तुमने जो प्रसाद मुझे दिया वह मैंने महाराज के लिए रख लिया। अब मुझे मेरा प्रसाद दे दो।" अब की बार प्रसाद लेकर तारा ने खा लिया। उसके बाद सब भक्तों ने माता का प्रसाद खाया।

इस प्रकार जागरण समाप्त करके प्रसाद खाने के पश्चात् रानी तारामति घर की ओर चली। तब राजा ने आगे बढ़कर रास्ता रोक लिया और कहा– "तुमने नीचों के घर का प्रसाद खाकर अपना धर्म नष्ट कर लिया है। अब मैं तूझे अपने घर में कैसे रखूं। तूने तो कूल की मर्यादा, मेरी प्रतिष्ठा का भी ध्यान नहीं रखा। जो प्रसाद तू अपनी झोली में रखकर मेरे लिए लाई है उसे खिलाकर मुझे भी अपवित्र बनाना चाहती है।" ऐसा कहते हुए जब राजा ने झोली की ओर देखा तो भगवती की कृपा से प्रसाद के स्थान पर उसमें चम्पा, चमेली, गेंदे के फूल, कच्चे चावल, सुपारी, मखाने, छुआरे, नारियल दिखाई दिए। (इस प्रसाद को ही बांटे का प्रसाद कहते हैं) राजा हरिश्चन्द्र रानी तारा को लेकर साथ लौट आया। वहां रानी ने ज्वाला मैया की

शक्ति से बिना माचिस या चकमक पत्थर की सहायता लिए बिना राजा को अग्नि प्रज्जवलित करके दिखाई जिसे देखकर राजा का आश्चर्य और बढ़ गया। राजा के मन में देवी के प्रति विश्वास व श्रद्धा जाग उठी। इसके बाद राजा ने रानी से कहा– "मैं माता के प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहता हूं।" रानी बोली– "प्रत्यक्ष दर्शन करने के लिए बहुत बड़ा त्याग होना चाहिए। यदि आप अपने पुत्र रोहित की बलि दे सकें तो आपको दुर्गा देवी के प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त हो सकते हैं।" राजा के मन में देवी के दर्शन करने के लगन हो गई थी। राजा ने पुत्र का मोह त्याग कर रोहित का सिर देवी के अर्पण कर दिया। ऐसी सच्ची श्रद्धा एवं विश्वास देख दुर्गामाता सिंह पर सवार होकर उसी समय प्रकट हो गई और राजा हरिश्चन्द्र माता के दर्शन करके कृतार्थ हुए। मरा हुआ पुत्र भी जीवित हो गया। उन्होंने विधिपूर्वक माता का पूजन करके अपराधों की क्षमा मांगी। सुखी रहने का आशीर्वाद देकर माता अन्तर्ध्यान हो गई।

राजा ने तारामति की भक्ति की प्रशंसा करते हुए कहा– "हे तारा! मैं तुम्हारे आचरण से अति प्रसन्न हूं। मेरे धन्य भाग जो तुम मुझे पत्नी के रूप में प्राप्त हुई हो।" इसके प्रश्चात राजा हरिश्चन्द्र ने भव्य मन्दिर तैयार करवाया। रानी तारा देवी एवं रुकमण दोनों मनुष्य योनि से छूटकर देवलोक को प्राप्त हुईं।

माता के जागरण में तारा रानी की इस कथा को जो मनुष्य भक्ति भाव से पढ़ता या सुनता है उसकी सभी मनोकामनायें पूर्ण होती हैं, सुख एवं समृद्धि बढ़ती है। शत्रुओं का नाश एवं सर्वमंगल होता है। इस

कथा के बिना जागरण सम्पूर्ण नहीं माना जाता।

।।जयकारा शेरावाली का, बोल सांचे दरबार की जय।।

नैना देवी की आरती

तेरा अद्भूत रूप निराला, आजा मेरी नैना माई ए।
तुझ पै तन मन धन सब वारूं आजा मेरी नैना माई ए।।
सुन्दर भवन बनाया तेरा। तेरी शोभा न्यारी,
नीके-नीके खम्बे लागे, अद्भुत चितर कारी।
तेरा रंग बिरंगा द्वारा।। आजा..
झांझा और मिरदंगा बाजे और बाजे शहनाई,
तुरई नगाड़ा ढोलक बाजे, तबला शब्द सुनाई।
तेरे द्वार पै नौबत बाजे।। आजा...
पीला चोला जरद किनारी, लाल ध्वजा फहराये,
सिर लालों दा मुकुट बिराजे निगाह नहिं ठहराये।

तेरा रूप न वरना जाये। आजा...

पान सुपारी ध्वजा, नारियल भेंट तिहारी लागे,
बालक बूढ़े नर नारी की भीड़ खड़ी तेरे आगे।
तेरी जय जय कार मनावे।। आजा...

कोई गाये कोई बजाये कोई ध्यान लगाये,
कोई बैठा तेरे आंगन नाम की टेर सुनाये।
कोई नृत्य करे तेरे आगे।। आजा...

कोई मांगे बेटा बेटी किसी को कंचन माया,
कोई मांगे जीवन साथी, कोई सुन्दर काया।
'भक्तो' किरपा तेरी मांगे।। आजा...

चिन्तापूरणी की आरती

चिन्तपुरनी, चिन्ता दूर करनी, जन को तारो भोली मां।
काली दा पुत्र पवन दा घोड़ा,
सिंह पर भई असवार, भोली मां॥ चिन्तपुरनी
एक हाथ खड़ग दूजे में खांडा,
तीजे त्रिशूल सम्भालो, भोली मां॥ चिन्तपुरनी
चौथी हथ चक्कर गदा पांचवें,
छटे मुण्डों दी माल, भोली मां॥चिन्तपुरनी
सातवें से रुण्ड मुण्ड विदारे
अठवें से असुर संहारे, भोली मां॥ चिन्तपुरनी
चम्पे का बाग लगा अति सुन्दर,
बैठी दीवान लगाय, भोली मां॥ चिन्तपुरनी
हरिहर ब्रह्मा तेरे भवन विराजे
लाल चंदोया बैठी तान, भोली मां॥ चिन्तपुरनी
औखी घाटी विकटा पैंडा,
तले बहे दरिया, भोली मां॥ चिन्तपुरनी

सुमर चरन ध्यानू जस गावे,

भक्तां दी पैज निभाओ, भोली मां।। चिन्तपुरनी

वज्रेश्वरी देवी की आरती

किला कांगड़ा तेरा मां, आन मुगल ने घेरा मां। किला०

नगर कोट की आदि भवानी, मुगल तुरक ने नाहीं मानी।

तवे जड़ नहर मंगाई, लाया भवन पे डेरा मां। किला०

तवे फोड़ मईयां परचण्डी, मुगला भाग गये पगडण्डी।

फूंक दिया सब डेरा मां, किला कांगड़ा तेरा मां। किला०

भागे मुगल आये शरनाई, भरम भुलाना बख्शो माई।

फेर ना पावां फेरा मां, किला कांगड़ा तेरा मां। किला०

झूले झण्डे लाल निशाने, माता पहने कुसुमड़े बाने

ध्यानू चाकर तेरा मां, किला कांगड़ा तेरा मां। किला०

ज्वाला जी की भेंट

मंगल की सेवा सुन मेरी देवा, हाथ जोड़ तेरे द्वार खड़े।
पान सुपारी ध्वजा नारियल, ले ज्वाला तेरी भेंट करे।।
सुन जगदम्बा कर न बिलम्बा, सन्तन का भण्डार भरे।
सन्तन प्रतिपाली, सदा खुशहाली, सब जग का कल्याण करे।।
बुद्धि विधाता, तू जग माता, मेरा कारज सिद्ध करे।
चरण कमल का लिया आसरा, शरण तुम्हारी आन परे।।
जब-जब भीड़ पड़ी भक्तन पर, तब-तब आय सहाय करे।

सन्तन प्रतिपाली....

बार-बार तू सब जग मोहे, तरुणी रूप अनूप धरे।
माता होकर पुत्र खिलावे, भार्या होकर भोग करे।।
सन्तन सुखदाई सदा सहाई, सन्त खड़े जय जयकार करे।

सन्तन प्रतिपाली.....

ब्रह्मा विष्णु महेश सहस्रफल, भेंट लिए तेरे द्वार खड़े।

अटल सिंहासन बैठी माता, सिर सोने का छत्र फिरे।।
जो कोई नाम लेई अम्बा का, पाप छिनक में भस्म करे।
सन्तन प्रतिपाली.......

वार शनिश्चर कुम-कुम वरणी, जब लंकड़ पर हुक्म करे।
खप्पर खड्ग त्रिशूल हाथ ले, रक्त बीज को भस्म करे।।
शुम्भ निशुम्भ पछाड़े माता, महिषासुर को पकड़ दले।
सन्तन प्रतिपाली.........

ब्रह्मा वेद पढ़े तेरे द्वारे, शिवशंकर हरि ध्यान करे।
इन्द्र कृष्ण तेरी करे आरती, चंवर कुबेर डुलाय रहे।।
जय जननी जय मातुभवानी, अटल भवन में राज्य करे।
सन्तन प्रतिपाली........

वैष्णो देवी की आरती

ते मात मेरी, हे सात मेरी, कैसी यह देर लगाई है दुर्गे। हे मात........

भव सागर में गिरा पड़ा हूं, काम आदि गृह में घिरा पड़ा हूं।
मोह आदि जाल में जकड़ा पड़ा हूं, काम आदि ग्रह में घिरा पड़ा हूं।
न मुझमें बल है न मुझमें विद्या, न मुझमें भक्ति न मुझमें शक्ति।
शरण तुम्हारी गिरा पड़ा हूं। हे मात......
न कोई मेरा कुटुम्ब साथी, ना ही मेरा शरीर साथी।
आप ही उबारो पकड़ के बाहीं। हे मात.....
चरण कमल को नौका बनाकर, मैं पार हूंगा खुशी मनाकर।
यमदूतों को मार भगाकर। हे मात.......
सदा ही तेरे गुणों को गाऊं, सदा ही तेरे स्वरुप को ध्याऊं।
नित प्रति तेरे गुणों को गाऊं। हे मात....
न मैं किसी का न कोई मेरा, छाया है चारों तरफ अन्धेरा।
पकड़ के ज्योति दिखा दो रस्ता। हे मात.....
शरण पड़े हैं हम तुम्हारी, करो यह नैया पार हमारी।
कैसी यह देर लगाई है दुर्गे। हे मात......

चामुण्डा देवी की आरती

जय अम्बे गौरी मैया जय श्यामा गौरी।
निशिदिन तुमको ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिवजी॥ जय अम्बे
मांग सिंदूर विराजत, टीकोक मृगमद को।
उज्जवल से दोउ नयना, चन्द्रबदन नीको॥ जय अम्बे
कनक समान कलेवर, रक्ताम्बर राजे।
रक्त पुष्प गलमाला, कंठ हार साजे॥ जय अम्बे।
केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारी।
सुरनर मुनि जन सेवत तिनके दुखहारी॥जय अम्बे
कानन कुण्डल शोभित नासाग्रे मोती।
कोटिक चन्द्र दिवाकर, समराजत जोती॥जय अम्बे
शुम्भ-निशुम्भ विदारे, महिषासुर धाती।
धूम्र विलोचन नयना, निशिदिन मदमाती॥जय अम्बे
चण्ड-मुण्ड संहारे, शोणित बीज हरे।

मधु कैटभ दोउ मारे, सुर भय दूर करे॥ जय अम्बे
ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी।
आगम-निगम बखानी, तुम शिव पटरानी॥ जय अम्बे
चौंसठ योगिनि गावत, नित्य करत भैरों।
बाजत ताल मृदंगा, और बाजत डमरू॥ जय अम्बे
तुम हो जग की माता, तुम ही हो भरता।
भक्तन की दुख हरता, सुख सम्पति करता। जय अम्बे
भुजा चार अति शोभित, वर मुद्रा धारी।
मन वांछित फल पावत, सेवत नर-नारी॥ जय अम्बे
कंचन थाल विराजत, अगर कपूर बाती।
मालकेतु में राजत, कोटि रजत ज्योति॥ जय अम्बे

मनसा देवी की आरती

जय मनसा माता श्रीं जय मनसा माता
जो नर तुमको ध्याता, जो नर मैया जी को ध्याता
मन वांछित फल पाता, जय मनसा माता
जरत्कारू मुनि पत्नी, तुम वासुकी भगिनी
मैया तुम वासुकी भगिनी
कश्यप की तुम कन्या आस्तीक की माता। जय.
सुर नर मुनिगण ध्यावत, सेवत नर नारी
मैया सेवन नर नारी
गर्व धनवन्तरी नाशिनी, हंस वाहिनी देवी
जय नागेश्वरी माता, जय मनसा माता....
पर्वत वासिनी संकट नाशिनी, अक्षय धनदात्री
मैया अक्षय धनदात्री

पुत्र पौत्र दायिनी माता, पुत्र पौत्र दायिनी माता

मन इच्छा फल दाता, जय मनसा माता...
मनसा जी की आरती जो कोई नर गाता
मैया जो जन नित गाता
कहत शिवानन्द स्वामी, रटत हरीहर स्वामी
सुख सम्पत्ति पाता, जय मनसा माता...

शाकम्भरी देवी की आरती

हरि ओम शाकुम्भर अम्बा जी का आरती कीजो
ऐसो अद्भुत रूप हृदय पर लीजो
शताक्षी दयालु की आरती कीजो
तुम परिपूर्ण आदि भवानी मां
सब घट तुम आप बखानी मां
शाकुम्भर अम्बा जी की आरती कीजो
तुम्हीं हो शाकुम्भरी, तुम ही हो शताक्षी मां
शिव मूर्ति माया, तुम ही हो प्रकाशी मां

श्री शाकुम्भर.....

नित जो नर-नारी अम्बे आरती गावे मां
इच्छा पूरन कीजो, शकुम्भरी दर्शन पावे मां
श्री शकुम्भर...

जो नर आरती पढ़े पढ़ावे मां
जो नर आरती सुने सुनावे मां
बसे बैकुण्ठ शाकुम्भर दर्शन पावे, श्री शाकुम्भर....

कालिका देवी की आरती

अम्बे तू है जगदम्बे काली जय दुर्गे खप्पर वाली,
तेरे ही गुन गाये भारती ओ मैया हम सब उतारें
तेरी आरती...

तेरे भक्त जनों पर माता भीड़ पड़ी है भारी।
दानव दल पर टूट पड़ो मां करके सिंह सवारी।
सौ-सौ सिंहों से है बलशाली है दस भुजा वाली।
दुखियों के दुखड़े निवारती, ओ मैया........

मां बेटे का है इस जग में बड़ा ही निर्मल नाता।
पूत कपूत सुने हैं पर ना माता सुनी कुमाता।
सब पर करुणा दर्शाने वाली, अमृत बरसाने वाली।
दुखियों के दुखड़ निबारती, ओ मैया ....
नहीं मांगते धन और दौलत ना चांदी ना सोना।
हम तो मांगते मां तेरे मन में छोटा-सा कोना।
सबकी बिगड़ी बनाने वाली, लाज बचाने वाली
सतियों के सत को संवारती, ओ मैया ....

ज्वाला जी की आरती

सुन मेरी देवी पर्वतवासिनी तेरा पार न पाया
सुवा चोली तेरे अंग विराजे केशर तिलक लगाया
नंगे पग अकबर आया सोने का छत्र चढ़ाया
ऊंचे ऊंचे पर्वत बने देवालय नीचे शहर बसाया
सतयुग त्रेता द्वापर मध्ये कलियुग राज्य सवाया

धूप दीप नैवेद्य आरती मोहन भोग लगाया।
ध्यानू भगत मैया तेरे गुण गावे मन वांछित फल पावे
सुन मेरी देवी....

दुर्गा देवी के 108 नाम

१.सती, २.साध्वो, ३.भवप्रीतो, ४.भवानी, ५.भवमोचनी, ६.आर्या, ७.दुर्गा, ८.आर्या, ९.आद्या, १०.त्रिनेत्रा, ११.शूलधारिणी, १२.पिनाक धारिणी, १३.चित्रा, १४.चन्द्रघण्टा, १५.महातपा, १६.मनः, १७.बुद्धि, १८.अहंकारा, १९.चित्तरूपा, २०. चित्ता, २१.चित्ति, २२.सर्वमन्त्रमयी, २३.सत्ता, २४.सत्यानन्दस्वरूपिणी, २५.अनन्ता, २६.भाविनी, २७.भाव्या, २८.भव्या, २९.अभव्या, ३०.सदागति, ३१.शाँभवी, ३२.देवमाता, ३३.स्वरूपिणी चिन्ता, ३४.रत्नप्रिया, ३५.सर्वविद्या, ३६.दक्षकन्या, ३७.दक्षयज्ञविनाशिनी, ३८.अपर्णा, ३९.अनेकवर्णा, ४०.पाटला, ४१.पाटलावती, ४२.पट्टाम्बरपरीधाना, ४३.कलमंजीररंजिनी, ४४.अमेय विक्रमा, ४५.क्रूरा, ४६.सुन्दरी, ४७.सुरसुन्दरी, ४८.धनदुर्गा, ४९.मातंगी, ५०.मतंगमुनिपूजिता, ५१.ब्राह्मी, ५२.माहेश्वरी, ५३.ऐन्द्री, ५४.कौमारी, ५५.वैष्णवी, ५६.चामुण्डा, ५७.वाराही, ५८.लक्ष्मी, ५९.पुरूषाकृती, ६०.विमला, ६१.उत्कर्षिनी, ६२.ज्ञाना, ६३.क्रिया, ६४.नित्या, ६५.बुद्धिदा, ६६.बहुला, ६७.बहुलप्रेमी, ६८.सर्ववाहनवाहना, ६९.निशुम्भशुम्भहननी, ७०.महिषासुरमर्दिनी, ७१.मधुकैटभहन्त्री, ७२.चण्डमुण्डविनाशिनी, ७३.सर्वअसुरविनाशा, ७४.सर्वदानवघातिनी, ७५.सत्या, ७६.सर्वास्त्रधारिणी, ७७.अनेकशस्त्रहस्ता, ७८.अनेकास्त्रधारिणी, ७९.कुमारी, ८०.एक कन्या, ८१.कैशोरी, ८२.युवती, ८३.यतिः, ८४.अप्रौढ़ा, ८५.प्रौढ़ा, ८६.वृद्धमाता, ८७.बलप्रदा, ८८.महोदरी, ८९.मुक्तकेशी, ९०.घोररूपा, ९१.महाबला, ९२.अग्निज्वाला, ९३.रौद्रमुखी, ९४.कालरात्रि,

९५.तपस्विनी, ९६.नारायणी, ९७.भद्रकाली, ९८.विष्णुमाया, ९९.जलोदरी, १००.शिवदूती, १०१.कराली, १०२.अनन्ता, १०३.परमेश्वरी, १०४.कात्यायनी, १०५.सावित्री, १०६.प्रत्यक्षा, १०७.ब्रह्मवादिनी, १०८.सर्वशास्त्रमयी।

जो नर आरती पढ़े पढ़ावे माँ
जो नर आरती पढ़े सुनावें माँ
बसे बैकुण्ठ शाकम्भर दर्शन पावे, श्री शाकम्भरी...

प्रार्थना

मैया तू ही करेगी प्रतिपाल, ना मुझको और सहारा री।
मैया दीन हूं हीन अनाथ, मैं होकर दूखी पुकार री।।
मैया सारे देवों का मिल तेज, यह बना शरीर तुम्हारा री।
मैया अष्टभुजी तेरा रूप, वाहन है सिंह करारा री।।
मैया चक्र गदा त्रिशूल, लिए बरछी और दुधारा री।
मैया बाण धनुष कर धार; तू गरजे दे हुंकारा री।।
मैया कौन कोप सके ओट, लख थर्रावे जग सारा री।
मैया धार भयंकर रूप, झट महिषासुर को मारा री।।
मैया चण्ड मुण्ड दिए मार, और रक्तबीज महि डारा री।
मैया शुम्भ निशुम्भ विदार, दल असुरों का संहारा री।।
मैया मेरा है कौन कसूर, जो मुझको आज बिसारा री।

मैया हो अगर कोई अपराध, उसे दिल से कर दे न्यारा री॥

मैया पूत कूपातर होय, माता ना करे किनारा री।

मैया लो सुन करूण पुकार, है जग में तेरा पसारा री॥

मैया बीच भंवर मेरी नाव, ना दिखे कोई किनारा री।

मैया जिसने शरण लई आय, तू उसका काज सुधारा री॥

मैया वीर रूप निज धार, लेकर मैं आज कटारा री।

मैया देवो हमारे रिपु मार, हमें करे तेरा जयकारा री॥

मैया कीने बड़े-बड़े काज, यह काज मेरा क्या भारा री।

मैया दुशमन रहे हैं सिर गाज, तू उनकी कर दे छारा री॥

मैया तेरी दया की मुझको चाह, मैं घिर आफत से हारा री।

मैया कर-कर कोप कराल, दल दुश्मन कर दे गारा री॥

मैया मुझको तो तेरा ही आधार, कर बेड़ा पार हमारा री।

मैया कर दो दया भरपूर, दे लगा विजय का नारा री॥

मैया होकर निपट अधीर, यों करता अरज दोबारा री।

मैया फेरो दया की दृष्टि आप, हो रक्षा मिले उभारा री॥

मैया सारे विघ्न देओ टार, चमका दो मेरा सितारा री।

मैया दो धन यश बल मान, सेवक ने हाथ पसारा री॥

मैया आनन्द का कर मेरे राज, सुत अपना समझ पियारा री।

मैया दिव्य दरश दो आज, हो झट मेरा निस्तारा री॥

मैया पूरी विधि से यह पाठ, जो करता भक्त तिहारा री।

मैया हो सुख विविध प्रकार मिले संकट से छुटकारा री॥

मैया द्वार पड़ा हूं तेरे आय, जिंदल तेरा सहारा री।

मैया खुश होके देओ वरदान, आनन्द का बजे नगारा री॥

(समाप्त)